R.N.I. No. 2321/57
मई+जून 2023
ओ३म्
रजि. सं. MTR नं. 004/2022-24
अंक 4+5

तपोभूमि

विशेषांक

नीति-निधि

दुराचारी नर से तो दूर ही रहे जी सदा,
बुरी दृष्टि वाले से न रखे कभी नाता है।
नीच हो निवास वाके संग नहिं वास करे,
उसका प्रभाव मन बीच बुरा जाता है।
दुष्ट का न संग भूल करो कभी जीवन में,
सारे घोर संकटों को नींच खींच लाता है।
नीति की ये रीति ध्यान देके सुन लीजो सब,
नीचता के साथ नाश आप चला आता है।

भूमिका

परमपिता परमात्मा ने प्राणिमात्र के कल्याण के लिए सृष्टि को बनाया। सब प्राणियों में मनुष्य का शरीर सर्वोत्तम बनाया। जो जीव पुण्य के काम करते हैं उन्हें मानव शरीर प्राप्त होता है। अन्य जीवों के शरीर से मानव के शरीर में मूलभूत तीन विशेषतायें प्रभु ने दी हैं। उनमें से पहली विशेषता है कि सोचते-विचारने की शक्ति। अन्य जीव केवल अपने जीवन के चलाने के लिए विचार शक्ति रखते हैं। मनुष्य में विचार शक्ति सारे विश्व को चलाने की है। दूसरी विशेषता है कि वाणी की शक्ति। मनुष्य अपने चिन्तन की अभिव्यक्ति वाणी द्वारा करने में समर्थ है जब कि मानवेतर योनियाँ ऐसा करने में असमर्थ हैं। तीसरी शक्ति क्रिया शक्ति है जो दश अंगुलियों वाले हाथों से प्राप्त है जिनसे वह अनेक सुख सम्पादन करने वाली वस्तुओं का निर्माण कर सकता है। यदि मानव के विचार उच्चतम हैं वह प्राणीमात्र के कल्याण की भावना लिये हैं तब तो इन तीनों शक्तियों से वह संसार का अवर्णनीय भला कर सकता है और यदि विचार शक्ति का प्रवाह परोपकारमय न होकर घोर स्वार्थमय हुआ तो वह प्राणिमात्र के सर्वनाश का द्वार खोल देगा। प्राचीन इतिहास में इस बात का साक्षी मिलती है कि मानव के स्वार्थमय विचारों ने संसार को अशान्ति अग्नि में झोंक दिया था। आज भी स्वार्थपरता के कारण एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र के सर्वनाश के लिए तत्पर है। ईरान-ईराक, रूस और यूक्रेन आदि राष्ट्रों के संघर्ष भीषण तबाही मचा रहे हैं। एक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदाय का खून का प्यासा है। जाति में, गोत्र में, प्रान्तों में, परिवारों में, व्यक्तियों में, भाई और भाई में, पिता और पुत्र में, पति और पत्नी में वैचारिक संघर्षों ने अशान्ति की ज्वाला धधका रखी है।

ऋषियों, मुनियों, कवियों, साहित्यकारों, कथाकारों, दार्शनिकों आदि सभी को इसी बात का भय रहा कि कहीं विचारधारा विपरीत प्रवाहित हुई तो सर्वनाश निश्चित है। सारे मनीषियों ने अपने उच्चकोटि के सर्व कल्याणमय साहित्य का सृजन मात्र इसी उद्‌देश्य से किया कि जिससे व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रिय वैश्विक जीवन में समरसता आये। समस्त विश्व शान्तिमय बने प्राणिमात्र के कल्याण का मार्ग प्रशस्त हो। संसार में व्यक्ति अपने जीवन से लेकर

- शेष पृष्ठ संख्या 67 पर

ओ३म् वयं जयेम (ऋक्०)

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक कल्याण की साधिका

(आर्य जगत में सर्वाधिक लोकप्रिय मासिक)

वर्ष–69 सम्वत् 2080 विशेषांक मई + जून 2023 अंक 4–5

❁

संस्थापक

स्व0 आचार्य प्रेमभिक्षु

❁

सम्पादक

आचार्य स्वदेश

मोबा. 9456811519

❁

व्यवस्थापक

कन्हैयालाल आर्य

मोबा. 9759804182

❁

विशेषांक

मई + जून 2023

❁

सृष्टि संवत्

1960853124

❁

दयानन्दाब्द: 199

❁

प्रकाशक

सत्य प्रकाशन, मथुरा

धर्म की महत्ता

–आचार्य स्वदेश

धर्म जो भी रखे धर्म उसको रखे,
धर्म का नाश समझो, सर्वनाश है।
धर्म छोड़ो नहीं चाहे मरना पड़े,
नित्य जीवन की समझो धर्म श्वास है।
आत्मा है नदी पुण्य तीरथ कहा,
सत्य का नीर इसमें बहाते रहो।
धैर्य के कूल टूटें न रक्षा करो,
नित्य लहरें दया की उठाते रहो।
लोभ से हीन आत्मा सदा पूत है,
सत्य के नीर से मन को धोते रहो।
पाप का मूल काटो सदा धर्म से,
पुण्य की बीज जीवन में बोते रहो।

❁❁❁

वार्षिक शुल्क 200/– पन्द्रह वर्ष के लिये शुल्क 2100/– रूपये

वेदवाणी

लेखकः– डॉ0 रामनाथ वेदालंकार

आ रभस्वेमाममृतस्य श्नुष्टिमच्छिद्यमाना जरदष्टिरस्तु ते।
असु त आयुः पुनरा भरामि रजस्तमो मोप गा मा प्र मेष्ठाः।।

–अथर्व0 8/2/1

शब्दार्थ–

(हे रोगी ! तू·) (इमाम्) इस (अमृतस्य श्नुष्टिम्) अमरण की धारा को (आरभस्व) ग्रहण कर ले। (अच्छिद्यमाना) विच्छिन्न न होती हुई (जरदष्टिः) जरावस्था की प्राप्ति (ते अस्तु) तुझे हो। (ते) तेरे लिए (पुनः) फिर (असुम्) प्राण, और (आयुः) आयु (आ भरामि) ले आता हूँ। तू (रजः) रजोगुण तथा (तमः) तमोगुण के (मा उप गाः) पास मत फटक, तू (मा प्र मेष्ठाः) मर मत।

भावार्थः–

हे भाई ! तू व्याकुल क्यों हो रहा है? रोग ने तुझे आ दबोचा है, तू शिरोवेदना से पीड़ित है, तेरी उदर–दरी में भयंकर दर्द है, ज्वर तेरे शरीर को झंझोर रहा है, तू अपच और आमवात से भी ग्रस्त है, तेरी हृदय की धड़कन भी बढ़ रही है, श्वासरोग भी तुझे सता रहा है। तू सोच रहा है, अब मृत्यु पंजा मारने ही वाली है। मरण की बात सोचना तू बन्द कर दे। तुझे कोई नहीं मार सकता है। अमरण की बात को तू धारारूप से ग्रहण कर ले। बार–बार मन में सोच कि मैं मरूँगा नहीं, मरूँगा नहीं। मृत्यु तेरे पास आये तो उसे धक्का दे दे, उसे फटकार कर कह दे कि मैं मरने वाला नहीं हूँ, तू मेरे पास क्यों आयी है? आश्वस्त हो जा, तू मरेगा नहीं। मरने के विचार को ही तिलांजलि दे दे। मन में सोच, मैं स्वस्थ हो रहा हूँ, रोग एक–एक करके मेरे पास से विदा हो रहे हैं, मुझे संजीवन–रस प्राप्त हो रहा है। तू इच्छाशक्ति को जागृत कर, रोगों पर आक्रोश बरसाता हुआ उन्हें ललकार दे, चले जाओ यहाँ से, मुझे तुम्हारे स्वागत की फुर्सत नहीं है। विश्वास रख, तू स्वस्थ हो रहा है। तुझे अच्छिद्यमान जरदृष्टि प्राप्त होगी, तू अभी वर्षों तक जीवित रहेगा, तुझे ऐसी शतवर्ष की जरावस्था प्राप्त होगी, जिसमें कोई छेद न होगा, जो किसी भी दोष से रहित होगी, जिसमें शरीर और मन की टूटन नहीं होगी।

क्या तू सोच रहा है कि मुझे मृत्यु से बचानेवाला कोई नहीं है, क्या तू मृत्यु को निकट खड़ी देख रहा है? विश्वस्त हो जा, मैं कुशल चिकित्सक तेरे स्वास्थ्य का उत्तरदायित्व ले रहा हूँ। जो प्राण तेरे शरीर से लगभग निकल ही चुके थे, उन्हें मैं पुनः खींचकर तेरे शरीर में ला रहा हूँ, जो तेरी आयु क्षीण हो चुकी

थी, उसे मैं पुनः जागृत कर रहा हूँ। मेरी ओषधि में शक्ति है, वह तेरे एक-एक रोग को मार रही है, तेरे रोग आक्रन्दन करते हुए तेरे पास से भाग रहे हैं। तू रजोगुण और तमोगुण से विद्ध मत हो। रजोगुण तुझमें असंगत गति पैदा कर रहा है, उससे प्रभावित होकर तू चिल्ला रहा है, चीख रहा है। तमोगुण तुझे मूर्छित कर रहा है, गतिहीन कर रहा है। इस रजस् और तमस् के प्राबल्य को तू झटका मारकर विदा कर दे। मरना-जीना तेरे हाथ में है। मृत्यु को ऐसा धक्का दे कि वह जाकर पहाड़ से टकराये। तू मर मत। तू नहीं मरेगा, नहीं मरेगा, मेरे औषध-रस से चिरकाल के लिए अमर हो जायेगा। ❁

तपोभूमि मासिक के पाठकों से विनम्र निवेदन

'तपोभूमि' मासिक पत्रिका प्रतिमाह आप तक पहुँच रही है। हमारा हर सम्भव प्रयास यही रहता है कि पत्रिका में उच्चकोटि के विद्वानों के सारगर्भित लेख प्रकाशित करके आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के सिद्धान्तों के अनुसार प्रचार करते हुये यह पत्रिका जन-जन तक पहुँचे। ताकि वे इसका पूर्णतया लाभ प्राप्त कर सकें। लेकिन यह तभी सम्भव है जब आप सबका सहयोग हमें मिले।

'तपोभूमि' मासिक के पाठको से निवेदन है कि जिन्होंने अपना वार्षिक शुल्क चालू वर्ष या पिछले वर्ष का शुल्क अभी तक नहीं भेजा है। वे शीघ्रातिशीघ्र शुल्क भिजवाने की व्यवस्था करें। वार्षिक शुल्क **200/-** दो सौ रुपये तथा पन्द्रह वर्ष हेतु **2100/-** दो हजार एक सौ रुपये भेजकर पत्रिका पढ़ने का लाभ उठायें।

हम आपको प्रति माह पत्रिका पहुँचाते रहेंगे। आपके सहयोग व हमारे परिश्रम से निरन्तरता बनी रहेगी और महर्षि दयानन्द सरस्वती जी व आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार जन-जन तक भी होता रहेगा।

हमें अपने ग्राहक महानुभावों से यही अपेक्षा है कि बिना विघ्न कार्य सुचारू रूप से चलता रहे। साथ ही यह भी प्रार्थना है कि आप अपने परिश्रम से नवीन ग्राहक बनवाने का सौभाग्य प्राप्त करें।

-धनराशि भेजने हेतु बैंक का नाम व पता एवं खाता संख्या-

इण्डियन ओवरसीज बैंक

शाखा युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, जयसिंहपुरा, मथुरा

I F S C Code- IOBA 0001441

'सत्य प्रकाशन' खाता संख्या- 14410100002341

'श्री विरजानन्द ट्रस्ट' को दान देने हेतु खाता संख्या- 14410100000351

सत्साहित्य का प्रचार-प्रसार करना ही राष्ट्र की सर्वोत्तम सेवा है।

ओ३म्

नीति-निधि

◆◆◆

मूर्खों का सुधार अति कठिन

॥ 1 ॥

प्रसह्य मणिमुद्धरेन्मकरवक्त्र दृष्ट्रान्तरात्।
समुद्रमपि सन्तरेत्प्रचल दूर्मिमालाकुलम्॥
भुजंगमपि कोपितं शिरसि पुष्पवत् धारयेत्।
न तु प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तमाराधयेत्॥

भावार्थ– मनुष्य मगरमच्छ के तेज दांतों मणि निकाल सकता है सागर की भ्ऊँची तरंगों में भी पार हो सकता है विषधर की माला बनाकर गले में पहन सकता है परन्तु बुराइयों में फंसे मूर्ख को सुधारना अत्यन्त कठिन कार्य है।

काव्यानुवाद

मानव मगर-मच्छ के मुँह से मणि भी ला सकता है।
उत्तुंग तरंगों से आकुल सागर में जा सकता है।
माला बना क्रुद्ध विषधर की गले लगा सकता है।
पर विषयों में फंसे मूढ़ को नहीं मना सकता है।

॥ 2 ॥

व्यालं बाल मृणाल तन्तुभिरसौ रोद्धुं समुज्जृम्भते।
छेत्तुं वज्रमणिं शिरीषकुसुमप्रान्तेन सन्नह्यति।
माधुर्यं मधुविन्दुना रचयितुं क्षाराम्बधेरीहते।
मूर्खान् यः पथि नेतुमिच्छन्ति बालात् सूक्तौसुधास्यन्दिभिः।

भावार्थ– जो व्यक्ति मधुर वचन बोलकर मूर्खों को सन्मार्ग पर लाना चाहता है उसका प्रयास ऐसा ही समझो जैसे कमल की कोमल नाल से मदमस्त हाथी का बाँधना या फूलों की पंखुड़ियों से हीरे को काटना और शहद की बूँद डालकर सागर को मीठा करना।

पद्यार्थ

कैसे कोमल कमल नाल से कुंजर बँध सकता है?
कब शिरीष की कलियों से दृढ़ हीरा कट सकता है?
क्या सिन्धु बिन्दु मधु की टपका कर मीठा हो सकता है?
तो फिर मूर्ख मधुर वाणी से कहाँ सुधर हो सकता है।

आत्म–बोध

॥3॥

यदा किञ्चज्ज्ञोऽहं द्विप इव मदान्धः समभवं।
सदा सर्वज्ञोऽस्मीत्यभवदवलिप्तं मम मनः।
यदा किंचित् किंचित् बुध जनसकाशदवगतं।
तदा मूर्खोऽस्मीति ज्वर इव मदो मे व्यपगतः।

भावार्थ– जब मैं अल्प ज्ञानी था तब मदमस्त हाथी की तरह घमण्ड में चूर रहता था और अपने मन में अपने को सर्वज्ञ समझता था परन्तु जब विद्वानों के सम्पर्क में आया तब ज्ञान हुआ कि मैं तो बिल्कुल मूर्ख हूँ ऐसा ज्ञान होते ही मेरा अभिमान ऐसे चला गया जैसे कि ज्वर चला जाता है।

पद्यार्थ

जीवन में थोड़ा–थोड़ा ज्ञान जब हुआ मुझे,
गज के समान अभिमान माना मन में।
सब कुछ जानता हूँ बात ऐसी मान के ही,
हिय में विचारा ज्ञानी और न भुवन में।
बुध जन पास जब थोड़ा–थोड़ा जाना हुआ,
पाया तब अपने को निरे मूढ़पन में।
गर्व गल गया रहा नाम को निशान नहीं,
बीते वेग ज्वर का ज्यों सुन्दर बदन में।

॥ 4 ॥

शक्यो वारयितुं जलेन हुतभुक् छत्रेण सूर्यतिपो।
नागेन्द्रो निशितांकुशेन समदो दण्डेन गोगर्दभौ।
व्याधिर्भेषज– संग्रहैश्च विविधैर्मन्त्रैः प्रयोगैर्विषं।
सर्वस्यौषधमस्ति शास्त्र विहितं मूर्खस्यानास्त्यौषधम्।

भावार्थ– अग्नि को जल से शान्त किया जा सकता है, छाते से धूप को रोका जा सकता है मदमस्त हाथी को तीखे अंकुश से रोका जा सकता है, गधा और साँड़ को लाठी से वश में किया जा सकता है, अनेक रोगों की औषधियों का शास्त्रों में संगृहीत किया है विष को मन्त्रों के प्रयोग से रोक सकते हैं, पर मूर्ख को ठीक करने की कोई औषधि नहीं है।

पद्यार्थ (सवैया)

रवि आतप तान वितान रूके, अरू आग रूके जल धार बहाये।
गज अंकुश मान रहे वश में, खर बैल चले नित दण्ड दिखाये।
सब औषधि व्याधि निवारन की, विष व्याल निकाल उपाय बताये।
नहिं औषधि शास्त्र लिखी न दिखी, जेहि ते नर मूढ़ सुजान कहाये॥

॥ 5 ॥

शास्त्रोपस्कृत शब्द सुन्दर गिरः शिष्य प्रदेयागमाः।
विख्याताः कवयो वसन्ति विषये यस्य प्रभोनिर्धनाः।
तज्जाड्यं वसुधाधिपस्य सुधियस्त्वर्थं विनापीश्वराः।
कुत्स्याः स्युः कुपरीक्षका हि मणयो यैरर्घतः पतिताः॥

भावार्थ– शास्त्रों द्वारा पवित्र वाणी बोलने वाले शिष्यों को वेदादि शास्त्र को पढ़कर धन्य करने वाले विद्वान् जिस राज्य में धनहीन होकर जीवन बिताते हैं। इससे उस राज्य के राजा का पागलपन प्रकट होता है मतिमान बिना धन के भी समर्थ होता है। मणिका का मूल्य न जानने वाले जौहरी मूढ़ होते हैं जो मणि का मूल्य नहीं जानते हैं।

पद्यार्थ (कवित्त)

शास्त्र ज्ञान भूषित मधुर वाणी वाचक जो,
शिष्यगण बीच ज्ञान वारि बरसाते हैं।
ऐसे बुधजन जिस भूपति के राज बीच,
दीन हीन होके निज जीवन बिताते हैं।

भूपति मूढ़ता प्रकट होती इससे तो,
विद्या रूपी भूषण से शोभा विज्ञ पाते हैं।
जौहरी न जानते जो सुन्दर मणि का मूल्य,
मणि का न दोष मूढ़ जौहरी कहाते हैं।

॥6॥

सच्चा आभूषण

केयूराणि न भूषयन्ति पुरूषं हारा न चन्द्रोज्ज्वला,
न स्नानं न विलेपनं न कुसुमंनालंकृता मूर्धजा।
वाण्येका समलंकरोति पुरूषं या संस्कृता धार्यते,
क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम्॥

भावार्थ– मनुष्य को सुन्दर वाजूवन्द चन्द्रमा की तरह चमकते हार, सुगन्धित साबुन लगाकर, स्नान तेल से मालिश, फूलों की माला और अच्छी तरह रख गए केश कभी विभूषित नहीं कर सकते। शास्त्र ज्ञान से विभूषित वाणी ही व्यक्ति की सबसे बड़ी आभूषण है क्योंकि सभी आभूषण घिस जाने से नष्ट होते हैं पर वाणी रूपी आभूषण सदा विभूषित करता है।

पद्यार्थ (कवित्त)

शोभित न होवे नर बाजूबन्द धारण से,
शशि के समान मणि हार लटकाने से।
नाना भाँति केशन सजाने से न शोभा आती,
तेल या फुलेल का लगा के नित नहाने से।
शास्त्र ज्ञान विभूषित मधुर वाणी वाचक जो,
शोभित वे होते मधु वचन सुनाने से।
वाणी रूपी भूषण से भूषित सुजन होवे,
और सारे भूषण हों नाश घिस जाने से।

॥7॥

विद्या की महत्ता

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्न गुप्तं धनम्,
विद्या भोगकरी यशः सुखकरी विद्या गुरूणां गुरूः।

विद्या बन्धुजनो विदेश गमने विद्या परा देवता,
विद्या राजसु पूज्यते नहि धनं विद्या विहीनः पशुः।

भावार्थ– विद्या ही मनुष्य की शोभा है गुप्त धन है विद्या सब भोगों को, यश को और सुख को देने वाली है। विद्या गुरूओं की भी गुरू है विदेश जाने पर विद्या ही बन्धुजन का काम करती है। विद्या ही सबसे बड़ी देवता है। राज सभाओं में सदा विद्या को ही सम्मान मिलता धन को उतना नहीं मिलता, अतः विद्या से रहित मनुष्य तो पशु के समान माना जाता है।

पद्यार्थ (कवित्त)

नर का अनूप रूप विद्या ही को जानो नित,
ढके हुए वैभव की सुन्दर बखारी है।
देके भव भोग सुख यश से करावे योग,
गुरूओं का गुरू जानो विद्या ये हमारी है।
देवता परा सी करें सफल मनोरथ को,
बन्धु सी विदेश में भी करे रखवारी है।
राज दरबार बीच विद्या ही विलास करे,
विद्या हीन पशु है जो नर तन धारी है।

॥ 8 ॥

लोक नायक

दाक्षिण्यं स्वजने दया परिजने शाठ्यं सदा दुर्जने,
प्रीतिः साधुजने जयो नृपजने विद्वज्जनेष्वार्जवम्।
शौर्यं शत्रुजने क्षमा गुरू जने नारी जनेऽधृष्टता,
ये चैवं पुरुषाः कलासु कुशलास्तेष्वेवलोकास्थितिः।

भावार्थ– जो अपने लोगों के प्रति आदरभाव, सेवकों के प्रति दयाभाव, दुष्टों के प्रति कठोरता, श्रेष्ठों से प्रीति राजाओं के अनुसार नीति युक्त व्यवहार, विद्वानों के प्रति निश्छल व्यवहार, शत्रुओं के प्रति वीरता, गुरूओं के प्रति नम्रता और नारियों के प्रति सम्मान दिखाते हैं ऐसे लोगों से ही संसार की व्यवस्थायें चलती हैं।

पद्यार्थ (कवित्त)

दया सेवकों पै दुष्टजनों पै कठोरता को,
बन्धुजन बीच जो उदार दिखाते हैं।

भूपति से नीति प्रीति स्वजनों से करें सदा,
बन्धुजन बीच छल को न अपनाते हैं।
शत्रुओं में शूर क्रूर भाव नहीं गुरूओं में,
नारियों के प्रति निज शीश को झुकाते हैं।
सकल कलाओं में कुशलता दिखाते जो,
ऐसे नरवीर लोक नायक कहाते हैं।

॥9॥

सत्संग से लाभ

जाड्यं धियो हरति सिंचति वाचि सत्यं,
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं,
सत्संगति कथय किन्न करोति पुंसाम्।

भावार्थ– सत् संगति बुद्धि की जड़ता को दूर कर देती है, वाणी में सत्य का प्रवेश कर देती है, चित्त में प्रसन्नता लाती है, चारों ओर यश को फैला देती है। कहने का तात्पर्य है कि सत्संगति व्यक्ति के जीवन में सारे सद्गुण लाती है।

पद्यार्थ

बुद्धि की जो जड़ता है दूर कर देती उसे,
वाणी बीच सदा सत्य भाव भर देती है।
उन्नति के पथ को प्रशस्त करती है सदा,
पाप ताप को भी झट दूर कर देती है।
यश के प्रकाश का विकास चहुँ ओर करे,
मन में भी सदा सौख्य सिन्धु भर देती है।
कहते हैं स्वदेश बात ध्यान में धरो तो सही,
सज्जन की संगति कहा न कर देती है।

॥10॥

कैसे कौन नष्ट होता

दौर्मन्त्रयान्नृपतिर्विनश्यति यतिः संगात्सुतो लालनात्।
विप्रोऽनध्ययनात् कुलं कुतनयाच्छीलं खलोपसनात्।

ह्रीर्मद्यादनवेपक्षणादपि कृषिः स्नेहः प्रवासाश्रयात्।
मैत्री चाप्रणयात् समृद्धिरनयात् त्यागात् प्रमादाद्धनम्।

भावार्थ– राजा दुष्ट सम्मत्ति से, विप्र न पढ़ने से, कुल दुष्ट पुत्र से, लज्जां मद्यपान से, सदाचार कुसंग से, खेती देखभाल न करने से, प्रेम विदेश वस जाने से, मित्र बिना प्रेम के, समृद्धि अनीति से और धन आलस्य और बिना विचारे व्यय करने से नष्ट होता है।

पद्यार्थ (कवित्त)

मान के विचार बुरा भूप का विनाश होवे,
अति मेल यति विप्र वेद बिन जाते हैं।
प्यारे करें पुत्र, मित्र नेह बिन जाते सुनो,
बस से विदेश प्रेम सारे घट जाते हैं।
अनीति के करे से सुख सम्पत्ति का नाश होवे,
त्याग व प्रमाद से भी धन घट जाते हैं।
मद्य से है लज्जा शील जाता है कुसंग करे,
देखे बिन खेती सारी पशु चर जाते हैं।

॥ 11 ॥

किससे मांगना चाहिए

रे रे चातक सावधान मनसा मित्रक्षणं श्रूयताम्।
अम्बोदा बहवो हि सन्ति गगने सर्वे हिनैतादृशाः।
केचिद् वृष्टि भिरार्द्रयन्ति वसुधां गर्जन्ति केचिद वृथा।
यं यं पश्यसि तस्य तस्य पुरतो मा ब्रूहि दीनं वचः॥

भावार्थ– हे मित्र पपीहे ! सावधान मन से एक क्षण मेरी भी बात सुन ! आकाश में बहुत से बादल हैं पर सब एक जैसे नहीं होते हैं, कुछ तो वर्षा करके भूमि को सींचते हैं और कुछ थोड़ी गर्जना करके चले जाते हैं। प्रत्येक को देखकर दीनता के वचन मत बोलाकर।

पद्यार्थ (कवित्त)

एरे मेरे प्यारे मित्र चातक चतुर सुन,
सावधान ध्यान धर मन में विचारिये।
घने घन कारे कजरारे हैं गगन बीच,
एकता में उनकी अनेकता निहारिये।

कोई वारि वरसा के वसुधा सरस करें,
गर्जत कोई कोरे बात न विसारिये।
दानी व अदानी बीच भेद भावना धार,
सबसे न दीन हीन बैनन उचारिये।

॥ 12 ॥

कौन पशु तुल्य है

येषां न विद्या न तपो न दानम्,
ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः।
ते मृर्त्य लोके भुवि भार भूता,
मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्ति।

भावार्थ– जिन लोगों में न विद्या, न तप, न ज्ञान, न सदाचार, न गुण है और न ही धर्म है वे मनुष्य संसार में पृथ्वी पर भार बने पशु के समान विचरण कर रहे हैं।

पद्यार्थ

ज्ञान, दान, तप, विद्या, सद्गुण,
शील धर्म न जिनमें।
वे नर भार रूप पृथ्वी पर,
पशुवत् हैं नरतन में।

॥ 13 ॥

दुष्टों की दृष्टि

जाड्यं ह्रीमति गण्यते व्रतरुचौ दम्भः शुचौ कैतवं,
शूरे निर्घृणता मुनौ विमतिता दैन्यं प्रियालापिनि।
तजस्विन्यवलिप्तता मुखरता वक्तर्य शक्तिः स्थिरे,
तत्को नाम गुणो भवेत्स गुणिनां यो दुर्जनै र्नांकितः।

भावार्थ– धूर्त लोग लज्जाशील को मूर्ख, व्रतनिष्ठ को दम्भी, सदाचारी को कपटी, शूरवीर को निर्दयी, मुनि को पागल, मधुर वक्ता को दीन, तेजस्वी को घमण्डी, अच्छे वक्ता को गप्पी, शान्त रहने वाले को असमर्थ बताते हैं तब सज्जनों में ऐसा कौन सा गुण वाकी है जिसमें दुष्ट लोग कलंक नहीं लगाते हैं।

पद्यार्थ (कवित्त)

सदाचारी कपटी व बुद्धू लज्जाशील लगें,
व्रतशील जन उन्हें दम्भी से दिखाते हैं।
शूरवीर दयाहीन दीन मधुभाषी लगें,
माने मुनि पागल नेक सकुचाते हैं।
तेजस्वी घमण्डी धीर मानव को शक्ति हीन,
वक्ता वकवादी मान फूले न समाते हैं।
गुणियों में ऐसा गुण कौन सा बचा है वाकी,
दुर्जन जिसमें कलंक न लगाते हैं।

॥ 14 ॥

क्या होने से ? क्या व्यर्थ है ?

लोभश्चेदगुणेन किं पिशुनता यदस्ति किं पातकैः,
सत्यं चेत्तपसा च किं शुचि मनो यदस्ति तीर्थेन किम्।
सौजन्यं यदि किं निजैः सुमहिमा यदस्ति किं मण्डनैः,
सद्विद्या यदि किं धनैरपयशो यदस्ति किं मृत्युना॥

भावार्थ– यदि लोभ हो तो अन्य दुर्गुणों की कोई आवश्यकता है नहीं। चुगलखोरी सबसे बड़ा पाप है, पवित्र मन से बड़ा कोई तीर्थ नहीं, सत्याग्रह में यदि लगन हो तो इससे बड़ा तप नहीं, यदि सज्जनों का सत्संग प्राप्त होता है तो बन्धु–बान्धवों की क्या आवश्यकता है? यदि सर्वत्र कीर्ति फैल रही है तो आभूषण व्यर्थ है। विद्या पास है तो जानो सब धन पास है। यदि अपयश हो गया हो तो मौत की क्या आवश्यकता अर्थात् बदनामी मौत के तुल्य समझो।

पद्यार्थ (कवित्त)

अवगुण नाना भांति लोभ के भये से होय,
चुगली समान कोई पाप न बताया है।
सत्यमय जीवन ही तप का परम धाम है,
शुद्ध मन बीच सार तीरथ का पाया है।
सौम्यता भये ते सारा जग ही स्वजन जानो,
सारा तेज भूषण का यश में समाया है।
जेते धन आकर वे विद्या में विलास करे,
मौत क्या? माथे पै कलंक जो लगाया है।

॥ 15॥

सेवा धर्म कठिन है

मौनान्मूकः प्रवचनपटु र्वाचको जल्पको वा,

धृष्टः पार्श्वे भवति च वसन्दूरतोऽप्य प्रगल्भः।

क्षान्त्या भीरुर्यदि न सहते प्रायशो नाभिजाताः,

सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः।

भावार्थ– सेवक को मौन रहने पर गूँगा कहते हैं बातचीत में चतुरता दिखाये तो बकवादी, पास खड़ा हो तो ढीठ और दूर रहे तो बुद्धिहीन, सहनशील को डरपोक, न सहे तो नीच कहा जाता है। इस प्रकार सेवाधर्म इतना गहन है कि योगियों के द्वारा भी इसका निभा पाना दुष्कर है।

पद्यार्थ (कवित्त)

वातूनी बकवासी बातचीत के करे से कहें,

मौन के रहें से मूक कहते धमकाते हैं।

पास के रहे से ठीक ऊपर है आन खड़ा,

दूर के रहे से मतिमन्द दरशाते हैं।

सहनशील बनने पर अति डरपोक कहें,

करें प्रतिकार तब नीच बतलाते हैं।

सेवाधर्म परम कठोर है बताया देखो,

योगीजन भी तो इसे समझ न पाते हैं।

॥ 16॥

महापुरुषों के लक्षण

विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा,

सदसि वाक्पटुता युधिविक्रमः।

यशसि चाभिरुचिर्व्यसनंश्रुतौ,

प्रकृति सिद्धमिदमिह महात्मनाम्॥

भावार्थ– विपत्ति आने पर धैर्य रखना, सम्पत्ति में क्षमाशील होना, सभा में सुन्दर भाषण करना, युद्ध में पराक्रम दिखाना, यश प्राप्त की अभिलाषा रखना, वेदादि सद्गुणों से लगाव रखना, ये बातें महापुरुषों में स्वभाव से ही पाई जाती है।

पद्यार्थ (कवित्त)

संकट में धीर सुख सम्पत्ति में क्षमाशील,
सभा बीच जाकर वाक्पटुता दिखाते हैं।
यश में सुरुचि रुचि युद्ध में दिखाते जोर,
मोर जैसा वैरियों से नाच नचवाते हैं।
वेदादि ग्रंथन के मन्थन में रत रहें,
सत्यमय जीवन में दिवस बिताते हैं।
स्वभाविक गुण सारे दीखें महापुरुषों में,
मानव समाज के जो भूषण कहलाते हैं।

॥ 17॥

संगति से क्या होता है

सन्तप्तायसि संस्थितस्य पयसो नामपि न श्रूयते,
मुक्ताकारतया तदेव नलिनी पत्रस्थितं राजते।
स्वात्यां सागर शुक्ति मध्यपतितं तन्मौक्तिकं जायते,
प्रायेणाधममध्यमोत्तम जुषामेवं विधा वृत्तयः।

भावार्थ– जल का एक बिन्दु गर्म लोहे पर गिरने से उसका नाम भी दिखाई नहीं देता। वही बिन्दु यदि कमल के पत्ते पर गिर जाता है तो मोती के सदृश सुशोभित हो जाता है और वही जल बिन्दु स्वाति नक्षत्र में सागर में स्थित सीप के मुँह में चला जाय तो मोती बन जाता है उसी तरह व्यक्ति भी अधम मध्यम और उत्तम जनों की संगति पाकर उसी तरह का हो जाता है।

पद्यार्थ (कवित्त)

तेज तपे लोहे बीज पानी की जो बूँद पड़े,
नाम को निशान भी तो उसका न पाता है।
जल जात पात पर बिन्दु वा विराजे जब,
मोती का भी मान मानो सहज ही घटाता है।
वही बिन्दु सागर में स्वाति मध्य सीपी पिये,
सुन्दर सुघड़ दिव्य मोती बन जाता है।
उत्तम अधम अरु मध्यम गुणों की खान,
इसी भांति मानव भी संगति से पाता है।

॥18॥

क्या करने से किसकी शोभा है

श्रोतं श्रुतेनैव न कुण्डलेन,
दानेन पाणिर्न तु कंकणेन।
विभाति काया करूणामयानाम्,
परोपकारेण नहि चन्दनेन॥

भावार्थ– कान की शोभा कुण्डल पहनने से नहीं अपितु वेद सुनने से है, और हाथों की शोभा कंगन पहनने से नहीं अपितु दान देने से है, दयालु पुरुषों का शरीर चन्दन लेप करने से नहीं अपितु परोपकार के कार्यों से शोभा पाता है।

पद्यार्थ

कान कुण्डलों से न वेद सुन शोभा पाते,
हाथ दान से सजे कंगनों से न सुहाते।
करके पर उपकार दयालु शोभा पाते,
कर चन्दन का लेप न काया वे चमकाते॥

॥19॥

मित्र के लक्षण

पापान् निवारयति योजयते हिताय,
गुह्यं निगूहति गुणान् प्रकटी करोति।
आपद् गतं च न जहाति ददाति काले,
सन्मित्र लक्षणामिदं प्रवदन्ति सन्ता:॥

भावार्थ– जो पापों से हटाकर हितकारी कार्यों में लगाता है छिपाने योग्य बातों को छिपाकर गुणों को प्रकट करता है आपत्ति आने पर साथ नहीं छोड़ता और समय आने पर धनादि के द्वारा रक्षा करता है यही अच्छे मित्र के लक्षण सन्त लोगों ने बताये हैं।

पद्यार्थ

पाप की प्रवृत्ति को भेंट कर दूर करें,
और सदा हितकारी कार्यों में लगाता है।
जिससे हो हानि ऐसी बात को छिपाये सदा,
सारे सद्गुण जग बीच प्रकटाता है।

आपत पड़े पै साथ छोड़े नहीं भूल के भी,
समय के पड़े पै निज सम्पत्ति लगाता है।
सच्चे मित्र के हैं सारे लक्षण जो कहे हैं सभी,
ऐसी बात सन्तों का समूह बतलाता है।

॥ 20॥

उत्तम, मध्यम, अधम के लक्षण

प्रारभ्यते न खलु विघ्न भयेन नीचैः,
प्रारभ्य विघ्नविहिताविरमन्ति मध्याः।
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः,
प्रारभ्य चोतमजना न परित्यजन्ति।

भावार्थ– निम्न श्रेणी के वे लोग हैं जो विघ्नों के भय के कार्य आरम्भ ही नहीं करते, वे लोग मध्यम श्रेणी हैं जो कार्य आरम्भ तो कर देते हैं पर विघ्नों के भय से बीच में ही त्याग देते हैं। उत्तम श्रेणी के वे लोग हैं जो विघ्नों से बार-बार प्रताड़ित होने पर भी लक्ष्य को प्राप्त किये बिना कार्य बीच में कभी नहीं छोड़ते हैं।

पद्यार्थ

प्रारम्भ कार्य न करें नीच जन बाधाओं के भय से,
पग पग बाधा देख मध्यम जन हटते हैं निश्चय से।
पर उत्तम जन कार्य सदा करते हैं वीर हृदय से,
बाधाओं को चीर सदा वे पाते मान विजय से।

॥ 21 ॥

दृढ़ संकल्पी

क्वचित् भूमौ शय्या क्वचिदपि च पर्यंकशयनम्,
क्वचिच्छाकाहारी क्वचिदपि च शाल्योदन रूचिः।
क्वचित् कन्था धारी क्वचिदपि च दिव्याम्बर धरो,
मनस्वी कार्यार्थी न गणयति दुःखं न च सुखम्।

भावार्थ– अपने लक्ष्य पर विवेकी जन सदा प्रयत्नशील रहते हैं वे कभी साधनों की चिन्ता नहीं करते हैं वे समय अनुसार कभी कठोर भूमि पर रात बिताते हैं तो कभी सुन्दर शय्याओं पर शयन करते

हैं कभी शाक-पात खाकर निर्वाह कर लेते हैं तो कभी खीर का स्वादिष्ट भोजन पाते हैं कभी सोने के लिए गुदड़ी मिलती है तो कभी रेशमी वस्त्र मिल जाते हैं पर वे लक्ष्य सिद्ध करने में तो दृढ़ रहते हैं।

पद्यार्थ

कहीं भूमि कठोर पै रात कटे, कहीं सुन्दर सेज बिछावत हैं,
कबहूँ दिन शाक को खाय कटे, कबहूँ पकवान उड़ावत हैं।
कबहूँ गुदड़ी से शरीर ढकें, कबहूँ पट रेशम पावत हैं,
व्रतशील सदा निज लक्ष्य रखें, दुःख द्वन्द्व उन्हें न सतावत हैं।

॥ 22॥

शील की रक्षा अवश्य करे

वरतुंगाच्छृंगाद गुरूशिखराणि क्वापि विषमे,
पतित्वायंकायः कठिनदृषदन्तर्विदलितः।
वरं न्यस्तो हस्तः फणिपतेर्मुखे तीक्ष्णदशने,
वरं वह्नौ पातस्तदपि न कृतः शीलविलयः॥

भावार्थ– चाहे ऊँची नीची पर्वत की चोटियों से कूद कर इस शरीर को नष्ट कर दे, जहरीले सर्प के मुख में हाथ डालकर अपने को डसवा ले या प्रज्वलित अग्नि में कूदकर अपने को भस्म कर डाले पर शील नष्ट कभी नहीं करना चाहिए।

पद्यार्थ

गिरि शृंग से गिर कर भले हि अन्त जीवन का करो।
सर्प के मुख हाथ धर कर विष दंश के द्वारा मरो।
याकि भीषण आग में जल भस्म काया को करो।
पर किसी भी मूल्य पर निज शील की रक्षा करो।

॥ 23॥

महापुरुषों के आभूषण

करेश्लाध्यस्त्यागः शिरसि गुरुपादप्रणयिनाम्,
मुखे सत्या वाणी विजयि भुजयो वीर्य मतुलम्।
हृदि स्वच्छा वृतिश्रुतम धिगतं च श्रवणयो,
र्विनाप्यैश्वर्येण प्रकृति महतां मण्डनमिदम्॥

भावार्थ– हाथों से प्रशंसनीय दान, गुरु के श्री चरणों में झुकना, मुख से सत्य वचन, भुजाओं से विजय दिखाने वाला बल, हृदय में पवित्र विचार, कानों में अच्छी प्रकार सुना हुआ शास्त्र का ज्ञान ही शोभा को बढ़ाने वाला हो बिना ऐश्वर्य के महापुरुषों के यही आभूषण हैं।

पद्यार्थ

शीश गुरु चरणों की धूलि से सुशोभित हो,
हाथ कर दान को अमित शोभा पाते हैं।
बाहुबल शोभित हो विजय दिलाने वाला,
आनन की शोभा सत्य भाषण बताते हैं।
पावन विचार हर हिय को सजाते सदा,
सुनने से वेद कान शोभा दिव्य पाते हैं।
ऐसे महापुरुषों को चाह कहां भूषण की,
ऐते सारे गुण दिव्य भूषण कहाते हैं।

॥ 24 ॥

सज्जनों के लक्षण

तृष्णां छिन्धि भजक्षमां जहि मदं पापे रतिं मा कृथाः।
सत्यं ब्रह्मामनुयाहि साधुपदवीं सेवस्य विद्वज्जनम्।
मान्यान् मानय विद्वषोऽप्यनुनय प्रच्छादाय स्वान् गुणान्।
कीर्तिं पालय दुःखिते कुरु दयामेऐतत् सतां लक्षणम्।

भावार्थ– लालच त्याग करना, क्षमा का भाव रखना, निरभिमान रहना, पाप में प्रीति न रखना, सत्य बोलना, सन्तों के मार्ग पर चलना, ब्रह्मणों की सेवा करना आदर के योग्य लोगों का सम्मान करना, शत्रुओं के प्रति भी नम्र रहना, अपने गुणों का विस्तार करना, यश प्राप्त करना, दु:खियों के प्रति दया रखना ये सारे गुण सज्जनों में पाये जाते हैं।

पद्यार्थ

त्याग तृष्णा का कर, हिय में क्षमा को धार,
मार अभिमान सत्य भाषण सुनाते हैं।
पाप में न प्रीति रीति सज्जन जनों की चले,
बुध जन बीच सेवाभाव अपनाते हैं।

दु:खियों पै दया रख यश विस्तारें सदा,
निज गुण ग्राम पै विराम न लगाते हैं।
पूजनीय जनों का भी आदर सत्कार करें,
अरियों में नम्र महापुरुष बन जाते हैं।

आत्म–बोध

निम्न श्लोक राजा भोज ने उस समय लिखा था जब उनके चाचा मुंज ने राज्य के लोभ से गुरुकुल में पढ़ते समय भोज को बुलाकर मार्ग में हत्या का षडयन्त्र रचा। जिसे वध करने वाले ने भोज को बताया तब राजा भोज ने अपने चाचा मुंज को सम्बोधित करते हुए लिखा कि–

।। 25 ।।

मान्धाता स महीपतिः कृतयुगेऽलंकार भूतो गतः।
सेतुर्येन महोदधौ विरचितः क्वासौ दशस्यान्तकः।
अन्ये चापि युधिष्ठिर प्रभृतयो यावन्त एवाभवन्।
नैकेनापि समं गतः वसुमती मुंज त्वया यास्यति।

भावार्थ– सतयुग के अलंकार राजा मान्धाता संसार छोड़ कर चले गये। रावण का वध करने वाले समुद्र पार सेतु का निर्माण करने वाले राम भी यहाँ नहीं रहे और भी राजा युधिष्ठिर जैसे अनेकों आये और चले गये। पर यह भूमि किसी के साथ नहीं गयी हे मुंज ! ऐसा प्रतीत होता है यह भूमि तेरे साथ अवश्य जायेगी।

पद्यार्थ

सतयुग के भूषण भूप मान्धाता हुए,
राज पाट छोड़ गये लगा न ठिकाना है।
बाँध दिया सागर में सेतु मारा लंकापति,
ऐसे श्रीराम गये जानत जमाना है।
और भी युधिष्ठिर से भूप हुए वसुधा पै,
गये छोड़ राज, राजधानी व खजाना है।
चाचा मुंज भूमि नहिं किसी के भी साथ गई,
तेरे साथ जायेगी ऐसा मेरा मन माना है।

॥ 26॥

दुष्टों को गुणों से प्रयोजन नहीं

सिंहो व्याकरणस्य कर्तुरहरत् प्राणान् प्रियान् पाणिनेः,
मीमांसा कृतमुन्ममाथ सहसा हस्ती मुनिं जैमिनीम्।
छन्दोज्ञानानधिं जघान मकरो वेलातटे पिंगलम्,
अज्ञानावृत्त चेतषामतिरुषां कोऽर्थस्तिरश्चां गुणैः।

भावार्थ– व्याकरण के कर्त्ता महर्षि पाणिनि को शेर ने मार डाला, मीमांसा शास्त्र के बनाने वाले जैमिनि को हाथी ने कुचल डाला और छन्द शास्त्र के बनाने वाले पिंगल आचार्य को नदी के किनारे मगरमच्छ खा गया। इससे यह सिद्ध है अज्ञान से जिनके चित्त ढके हैं उन्हें गुणों से कोई प्रयोजन नहीं।

पद्यार्थ

मार डाला सिंह ने व्याकरण के सूर्य मुनिवर पाणिनी को,
रौंद डाला मत्त गज ने शास्त्र मीमांसा रचियता जैमिनी को।
खा गया मकर नदिया के किनारे छन्दोनिधि पिंगल गुणी को,
मूढ़ता का वास जिनके चित्त में है क्या समझ पायेंगे वे सद्गुण धनी को।

किसकी मृत्यु निश्चित है

दुष्टा भार्या शठं मित्रं भृत्याश्चोत्तरदायकः।
ससर्पे च गृहे वासो मृत्युरेव न संशयः॥

भावार्थ– दुश्चरिता पत्नी, कपटी व स्वार्थी मित्र, बात का प्रतिवाद करने वाल सेवक और सर्प के निवास वाला घर इन चारों स्थितियों के उपस्थित होने पर मृत्यु ही समझो इसमें सन्देह नहीं है।

पद्यार्थ दोहा

नीच नारी अरू मित्र शठ, सेवक हो वाचाल।
सांप वास घर में करे, निश्चय जानो काल॥

कहाँ नहीं रहना चाहिए

यस्मिन्देशे न सम्मानो, न वृतिर्न च बान्धवाः।
न च विद्या आगम क्वापि देशं तं परिवर्जयेत्॥

भावार्थ– जिस स्थान में न सम्मानित हों, न अजीविका हो, भाई बन्धु न हो तथा विद्या की

प्राप्ति न हो ऐसे स्थान को त्याग देना ही हितकारी है।

पद्यार्थ

जहाँ जीविका मान नहिं, नहीं बन्धुगण पास।
विद्या का आगम नहीं, भूल करे न वास॥

कहाँ निवास नहीं करना चाहिए

धनिकः श्रोत्रियो राजा नदी वैद्यस्तु पंचमः।
पंच यत्र न विद्यत्ते, न तत्र दिवसं वसेत्॥

भावार्थ– धनवान्, वेद का विद्वान् राजा, नदी और पाँचवां वैद्य ये पाँचों जिस स्थान पर न हों, उस देश में एक दिन भी निवास नहीं करना चाहिए।

पद्यार्थ

नदी, वैद्य, राजा, धनी वेदों का विद्वान्।
ये पाँचों ना हों जहाँ, बसे नहीं मतिमान्॥

किस मित्र को त्यागें

परोक्षे कार्यं हन्तारं प्रत्यक्षे प्रियवादिनम्।
वर्जयेत्तादृशं मित्रं, विषकुम्भं पयोमुखम्॥

भावार्थ– सामने मधु वाणी से बोले और पीछे कार्य की हानि करे, ऐसे मित्र से सदैव दूर रहो, वह तो उस विष के घड़े के समान है जिसके मुख पर तो दूध है लेकिन अन्दर जहर है।

पद्यार्थ

सामने मधुर बोल बोल के सुनावे ऐसे,
जैसे कोई इससे न हितकारी बड़ा है।
पीछे रचता है षड्यन्त्र ऐसे नाना भाँति,
बाधा वन जीवन में पग-पग खड़ा है।
ऐसे नीच मित्र का न भूल के करें जी साथ,
स्वारथ का साथी न विपत्ति बीच अड़ा है।
मित्र मत कहो बस विष से भरा है पूरा,
जैसे विष भरा दूध मुख वाला घड़ा है।

कौन शत्रु है ?

माता शत्रु पिता बैरी येन बालो न पाठितः।
न शोभते सभामध्ये, हंस मध्ये वको यथा।।

भावार्थ– वे माता-पिता अपने सन्तानों के पक्के शत्रु हैं जो उनको अच्छे संस्कार देकर शिक्षित नहीं करते, उनके सन्तनादि सभा आदि उत्तम स्थानों में ऐसे ही शोभा को प्राप्त नहीं होते जैसे हंसों के बीच बगुला पक्षी शोभा को प्राप्त नहीं होता।

पद्यार्थ

माता पिता बैरी भये, जो न पढ़ाये बाल।
सभा बीच वे यों लगे, ज्यों बक मध्य मराल॥

बिना अग्नि के कौन जलाता है ?

कान्ता वियोगः स्वजनापमानः ऋणस्य शेषं कुनृपस्य सेवा।
दरिद्र भावो विषमा सभा च विनाग्निमेते प्रदहन्तिकायम्।।

भावार्थ– पत्नी का वियोग, अपने व्यक्ति द्वारा किया अपमान, शेष रहा कर्जा, दुष्ट राजा की नौकरी, गरीबी तथा मूर्खों का साथ ये सब बिना अग्नि के शरीर जलाने वाले होते हैं।

पद्यार्थ

पत्नी वियोग आग हिय क्षार-क्षार करे,
बन्धु द्वारा किया अपमान भी जलाता है।
दुष्ट शासकों की सेवा अति दुःख दाई होय,
ऋण का भी बोझ रोज चित्त चैन खाता है।
धनहीनता का भाव भव्यता कुचल देवे,
नीचता का संग सब संकट दिखाता है।
जग को निहार बार-बार ये प्रतीति भई,
बिना आग इनसे शरीर सूख जाता है।

किसकी संगति विनाशक है ?

दुराचारी च दुर्दृष्टिर्दुरावासी च दुर्जनः।
यन्मैत्री क्रियते पुम्भिर्नरः शीघ्रं विनश्यति।।

भावार्थ– गलत आचरण करने वाले से, बुरी निगाह वाले से, गलत स्थान पर रहने वाले से और दुष्ट से जो भी मित्रता करेगा। उसका सर्वनाश शीघ्र हो जाता है।

पद्यार्थ

दुराचारी नर से तो दूर ही रहे जी सदा,
बुरी दृष्टि वाले से न रखे कभी नाता है।
नीच हो निवास वाके संग नहीं वास करें,
उसका भी प्रभाव मन बीच बुरा जाता है।
दुष्ट का न संग कभी भूल के करो जी भाई,
सारे घोर संकटों को नीच खींच लाता है।
नीति की ये रीति ध्यान देके सुन लीजो सब,
नीचता के साथ नाश आप चला जाता है।

क्या लक्षण किसको बताता है ?

आचारः कुलमाख्याति देशमाख्याति भाषणम्।
सम्भ्रमः स्नेहमाख्याति वपुराख्याति भोजनम्।।

भावार्थ– आचरण कुल को बता देता है भाषा देश को बता देती है चाल ढाल प्रेम को प्रदर्शित कर देती है। भोजन को शरीर बता देता है।

पद्यार्थ

मानव का आचार ही, कुल को देत बताय।
आगत का स्वागत सदा, देता प्रीति जनाय।
देता प्रीति जाय, अन्न खाया बतलावे।
जैसा खावे अन्न, गात वैसा बन जावे।
कौन देश का व्यक्ति ज्ञान होता उसका तब।
अपनी भाषा बोल, पोल खोले जब मानव।

किसको कहाँ लगायें ?

सुकुले योजयेत् कन्यां, पुत्रं विद्यासु योजयेत्।
व्यसने योजयेत् शत्रुं, मित्रं धर्मे नियोजयेत्।।

भावार्थ– अच्छे कुल में कन्या को प्रदान करें और पुत्र को उत्तम विद्याओं के अभ्यास में लगाओ,

दुष्ट शत्रु को आपत्तियों में फंसाये रखे, और मित्र को सदा उत्तम धर्म के कार्यों में लगायें।

पद्यार्थ

कन्या कर दान भले कुल में, जिससे सुख जीवन में अति पावे।
पुत्र सदा सुख से विचरे, इससे शुभ ज्ञान उसे करवावे।
शत्रु न भूल चढ़े सिर पे, नित झंझट बीच उसे उलझावे।
मित्र मिले हित का कर ज्ञान, सदा उससे शुभ काम करावे।

किसके लिए क्या त्यागें ?

त्येजदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत्।
ग्रामं जनपदस्यार्थे आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत्।।

भावार्थ– कुल की रक्षा के लिए एक को त्याग दे और यदि ग्राम की रक्षा का प्रश्न हो तो कुल को त्याग दो। जनपद की रक्षा के लिए ग्राम को छोड़ देना चाहिए और आत्म कल्याण के लिए पृथिवी का भी परित्याग कर दे।

पद्यार्थ

सकल कुल कल्याण के हित, एक का परित्याग कर।
और कुल को छोड़कर भी, ग्राम का कल्याण कर।
आ पड़े यदि देश का हित, तब ग्राम को भी छोड़िए।
उद्धार आत्मा का न हो, तो मुँह सभी से मोड़िये।

अति करना ठीक नहीं ?

अतिरूपेण वै सीता अतिगर्वेण रावणः।
बलिरति दानेन, अति सर्वत्र वर्जयेत्।।

भावार्थ– अत्यन्त रुपवान होने से सीता का अपहरण हुआ और अति गर्व के कारण रावण का विनाश हुआ, अति दान के कारण राजा बलि बन्दी बना। अतः अति प्रत्येक जगह हानिकारक है। इसको सर्वथा त्याग देना चाहिए।

पद्यार्थ (सवैया)

दुख दारुण ही अति रूप बना, वन बीच हुआ सिय का हरना।
अति गर्व किये धन धूलि मिला, उस रावण का समझो मरना।
बलि बन्द हुआ अति दान दिये, सब सोच समझ करनी करना।
अति के सब भाव तजो मन से, अति ठीक नहीं मन में भरना।

सम्पत्ति कहाँ जाती ?

मूर्खा यत्र न पूजयन्ते धान्यं यत्र सुसंचितम्।
दम्पत्योः कलहो नास्ति, तत्र श्रीः स्वयामागता।।

भावार्थ– जहाँ मूर्खों की पूजा नहीं होती, घर में अन्नादि का यथायोग्य भण्डार रहता है और पति पत्नी में आपसी कलह नहीं होता है वहाँ पर सम्पत्ति स्वयं आ जाती है।

पद्यार्थ

नहिं मूढ़न को सम्मान जहाँ, बसते न वहाँ गुणहीन अनारी।
घर अन्न भरा भरपूर रहे, सब पेट भरे जन दीन दुःखारी।
मिल बात करें सब प्रेम भरी, लड़ते न कभी घर में नर नारी।
कहते कवि श्री उनके घर में, बरसात करें धन की अतिभारी।

पूर्व निश्चित क्या है

आयुः कर्म च वित्तं च विद्या निधनमेव च।
पंचैतानि हि सृज्यते गर्भस्थस्यैव देहिनः।।

भावार्थ– आयु गुणानुसार कर्म धन विद्या और मृत्यु यह पांचों प्राणी गर्भ में निश्चित हो जाते हैं।

पद्यार्थ

आयु, विद्या, मृत्यु , धन, कर्म पाँचवां जान।
गर्भकाल में ही सुनो, नियत करे भगवान्॥

पुण्यलोक कौन ?

साधुभ्यस्ते निर्वर्तन्ते पुत्राः मित्राणि बान्धवाः।
ये च तेः सह गन्तारस्तद्धर्मात्सुकृतं कुलम्।।

भावार्थ– जिन साधुओं से पुत्र मित्र बन्धु बान्धव अपना सम्बन्ध समाप्त कर लेते हैं उन्हीं साधुओं की संगति से अनेकों कुल व जन धार्मिक होकर पुण्य भागी बन जाते हैं।

पद्यार्थ

पुत्र मित्र अरु बन्धगण, दे साधु को छोड़।
उसी साधु के संग ते, सुधरे कई करोड़॥

कैसे किसका पालन होता ?

दर्शनध्यान स्पर्शैर्मत्सी कर्मी च पक्षिणी।
शिशुं पालयेत् नित्यं तथा सज्जनः संगति।।

भावार्थ– मछली देख के कछुवी ध्यान से और पक्षी स्पर्श से अपने बच्चों का पालन करती है ठीक ऐसा ही साधुओं का संग व्यक्ति को सब प्रकार समर्थ कर देता है।

पद्यार्थ (सवैया)

मछली शिशु पालन को करती, बस देख उसे अपने दृग से।
बस छूकर ही शिशु स्वस्थ रखे, यह रीति सभी समझो खग से।
कर ध्यान सदा कछुवी रखती, सब भाँति बचा शिशु को जग से।
इस भांति सुनो शुभ संगति ही, नित दूर रखे उलटे मग से।

समय का महत्व

यावत् स्वस्थो ह्यं देहो यावत्मृत्युश्च दूरतः।
तावत दात्महितं कुर्यात् प्राणान्ते किं करिष्यति।।

भावार्थ– जब तक यह देह स्वस्थ है और मृत्यु भी अति दूर है तब तक आत्म कल्याण का मार्ग प्रशस्त कर लो मरने पर क्या करोगे अर्थात् कुछ नहीं।

पद्यार्थ

जब तक स्वस्थ शरीर है, और मृत्यु है दूर।
तब तक निज कल्याण के, कर्म करो भरपूर॥

मूर्ख पुत्र दुःखकारी

मूर्खाश्चिरायुर्जातोपि तस्माज्जातमृतोवरः।
मृतश्च स्वल्पदुःखाय यावज्जीवं जडो दहेत्।।

भावार्थ– मूर्ख पुत्र से अच्छा वह है जो पैदा होते ही मर जाता है क्योंकि पैदा होते ही जो मर जाता है तो थोड़ा दुःख होता है मूर्ख तो सारे जीवन ही दुःख देता है।

पद्यार्थ

अच्छा है वह सुत सुनो, जन्म लेत मर जाय।
चिरजीवी मूर्ख वृथा, जीवन नरक बनाय॥

संसार में शान्ति के साधन

संसार ताप दग्धानां त्रयो विश्रान्ति हेन्तवः।

अपत्यं च कलत्रं च सतां संगतिरेव च।।

भावार्थ– संसार के दुःखों से जलते हुए लोगों के लिए शान्ति के तीन ही साधन हैं। उत्तम सन्तान, सुलक्षणी पत्नी और सज्जनों की संगति।

पद्यार्थ

दैहिक दैविक भौतिक ताप सदा नर को जग बीच जलावें।
तीन महासुख के सुन साधन, ले अपनाय ऋषि बतलावें।
नारि रहे मन के अनुकूल, सुलक्षण पूत सभी सुख लावें।
संगति राख सुधी जन की, दुःख भेंट सभी सुख शान्ति दिलावें।

छह शरीर को जलाते

कुग्रामवासः कुलहीन सेवा कुभोजनं क्रोधमुखी च भार्या।

पुत्रश्च मूर्खो विधवा च कन्या विनाऽग्निनोषट् प्रदहन्ति कायम्।।

भावार्थ–असभ्य गाँव में रहना, नीच व्यक्ति की सेवा करना, गलत भोजन, सदा क्रोध करने वाली स्त्री, मूर्ख पुत्र और विधवा कन्या यह छह बिना अग्नि के शरीर को जला देते हैं।

पद्यार्थ

बुरे गाँव बीच वास नरक समान मान,
मद्यमाँस आदि खाना पतन की खाई है।
काल के समान क्रोधमुखी घरनी को जान,
कुलहीन जन की न सेवा सुखदाई है।
मूरख हो पूत बेटी विधवा बने जो कहूँ,
उसके दुःखों की थाह किसी ने पाई है।
इतने कहे जो सभी एक साथ आयें दुःख,
आग बिन काया तिल-तिल सूख जाई है।

एकाकिना तपोद्वाभ्यां पठनं गायनं त्रिभिः।

चतुर्भिर्गमनं क्षेत्रे पंचभिर्बहुभिरणे।।

भावार्थ– तप अकेला करें, अध्ययन दो मिलकर करें, गाना तीन से अच्छा होता है, यात्रा में चार हो। खेती में पांच और युद्ध में बहुत लोग साथ हों तभी काम बनता है।

पद्यार्थ

तप एक करें वन में बस के, अरु पाठ सदा मिल दो करना।
बिन तीन मिलें नहिं गान बने, मिल चार सदा जग में फिरना।
जब पाँच मिले तब खेत करें, बिन पाँच न खेत कभी करना।
रण रोप सदा बहु लोगन ले, यदि एक लड़े तब हो मरना।

शून्यता कैसे?

अपुत्रस्य गृहं शून्यं दिश शुन्यास्त्व बान्धवा।
मूर्खस्य हृदयं शून्यं सर्वशून्यं दरिद्रता।।

भावार्थ– पुत्र के बिना घर सूना है, भाईयों के बिना दिशायें सूनी हैं, मूर्ख व्यक्ति का हृदय शून्य है और गरीब के लिए सब संसार सूना है।

पद्यार्थ

सुत के बिन है घर शून्य कहा, बिन पूत लगे घर माँहि उदासी।
बिन बन्धु दिशा सब शून्य कहीं, सब ओर लगे बिन बन्धु निशा सी।
हिय शून्य कहा अति मूरख का, उसमें न रहे कुछ सोच जरासी।
अति निर्धन को सब शून्य मही, जग बीच रहे भर हाय उसासी।

कब क्या विष है ?

अनभ्यासे विषं शास्त्र मजीर्णे भोजनम् विषम्।
दरिद्रस्य विषं गोष्ठी, वृद्धस्य तरुणी विषम्।।

भावार्थ– बिना अभ्यास किये शास्त्र विष के समान है और यदि पचता नहीं तो भोजन विष है। गरीब के लिए सभा में जाना विष तुल्य है क्योंकि उसकी कोई नहीं सुनता है और वृद्ध पुरुष के लिए युवती स्त्री विष तुल्य है।

पद्यार्थ

भोजन विष है बिन पचे, शास्त्र बिना अभ्यास।
युवती विष है वृद्ध को, बिन धन सभा उदास।।

किसको त्यागें

त्यजेदधर्मं दयाहीनं विद्याहीनं गुरूं त्यजेत्।
त्यजेत् क्रोध–मुखी भार्यां निःस्नेहान् बान्धावान् त्यजेत्।।

भावार्थ– दया से रहित धर्म को त्याग दे, विद्या से रहित गुरू को त्याग दे, क्रोध करने वाली पत्नी को त्याग दे और प्रेम न रखने वाले बन्धुओं को त्याग दे।

पद्यार्थ

दयाहीन होवे ऐसा धर्म मत मानो कभी,
उसका तो त्याग करना ही सुखदाई है।
विद्याहीन होवे नहि ज्ञान ध्यान जाने कछु,
मत मानो गुरू उसे पतन की खाई है।
छोटी मोटी बात पै ही क्रोध अति भारी करे,
त्याग देवें नारी ऐसी अति दुखदाई है।
नेह रूपी बन्धन निभाये नहीं बन्धु यदि,
छोड़ छाड़ दूर रहे काहे का वो भाई है।

कौन कब जीर्ण होता ?

अध्वा जरा मनुष्याणां, वाजिनां बन्धनं जरा।
अमैथुनं जरा स्त्रीणां, वस्त्राणामातपो जरा।।

भावार्थ– अत्यधिक पैदल चलना मनुष्यों को क्षीण कर देता है और निरन्तर बंधे रहने से घोड़े कमजोर हो जाते हैं। सम्भोग की तृप्ति न होने से स्त्री जीर्ण हो जाती है वस्त्र अधिक ताप से जीर्णता को प्राप्त होता है।

पद्यार्थ

नर बूढ़ा हो पन्थ से, नारी हो बिन भोग।
अश्व वृद्ध हो बन्ध से, वस्त्र धूप के योग।।

पितर कौन ?

जनिता चोपनेता च यस्तु विद्यां प्रयच्छति।
अन्नदाता भयत्राता पंचेते पितरः स्मृताः।।

भावार्थ– जन्म देने वाला उपनयन संस्कार करने वाला और जो विद्या दे, अन्न दे, भय दूर करे।

ये पांचों पिता के तुल्य हैं।

पद्यार्थ

जन्म देय उपनयन कर, देते विद्या साँच।
अन्न देय, भय को हरे, पिता समझ ये पाँच॥

माता कितनी

राजपत्नी गुरोः पत्नी, मित्र–पत्नी तथैव च।
पत्नी माता, स्व माता च पचैताः मातरः स्मृताः।।

भावार्थ– राजा की पत्नी, गुरू की पत्नी, मित्र की पत्नी, सास और अपनी माता ये पांच माता ही मानी गई हैं।

पद्यार्थ

रानी गुरू पत्नी तथा, मित्र नारि भी जान।
निज माता अरू सास को, माता के सम मान॥

किसका कौन देव

अग्नि देवो द्विजातीनां मुनीनां हृदि दैवतम्।
प्रतिमा स्वल्पबुद्धीनां सर्वत्र समदर्शिनः।।

भावार्थ– द्विजों के लिए अग्निहोत्रादि कृत्य करना देव पूजा है मननशील लोगों के हृदय में दिव्यभाव स्थापित रखना ही देवपूजा, अल्प बुद्धियों के लिए पत्थर ही देवता है और समदर्शी तत्वज्ञानियों के लिए सर्वत्र व्याप्त ईश्वर देवता है।

पद्यार्थ

अग्नि देव है द्विजों का, मुनियों का हिय बीच।
समदर्शी को ईश है, पत्थर पूजे नीच॥

बिना इच्छा कुछ नहीं

न स्पृहोनाधिकारीस्यात् नाकामी मण्डनप्रियः।
नाविदग्धः प्रियं ब्रूयात्, स्फुटवक्ता न वंचकः।।

भावार्थ–बिना इच्छा के कोई अधिकारी नहीं होता, ईर्ष्यालु कभी प्रिय नहीं होता, जिसमें वासना नहीं वह कभी शृंगार नहीं करता है और साफ कहने वाला ठग नहीं होता है।

पद्यार्थ

बिन बात न आस जगे कबहूँ, बिन आस बने न कभी अधिकारी।
तन भूषण भूषित हो न कभी, मन से कर त्याग बने ब्रह्मचारी।
प्रिय बात न बोल सके कबहूँ, बिन ज्ञान सुनो जग में अविचारी।
बिन लाग-लपेट जो बात करें, कपटी नहीं होय कभी नर-नारी।

कब क्या नष्ट होता

आलस्योपहता विद्या पर हस्तगताः स्त्रियः।
अल्पबीजहतं क्षेत्रं, हतं सैन्यम नायकम्।।

भावार्थ- आलस्य से विद्या का विनाश हो जाता है, पराये घर में रहने से स्त्री का नाश हो जाता है, थोड़े से बीज डालने से खेती का नाश हो जाता है और बिना सेनापति के सेना का नाश हो जाता है।

पद्यार्थ

यत्न बिना विद्या मिटे, पर घर जाये नार।
अल्प बीज खेती मिटे, सेना बिन सरदार।।

किससे क्या धारण होता

अभ्यासाद् धार्यते विद्या, कुलशीलेन धार्यते।
गुणेन ज्ञायते त्वार्यः कोपो नेत्रेण गम्यते।।

भावार्थ- बार-बार अभ्यास से विद्या आती है उत्तमशील से कुल की रक्षा होती है, आर्य की पहचान उसके शुभ गुणों से ही होती है और नेत्रों से क्रोध पहचाना जाता है।

पद्यार्थ

बार-बार करता है पाठ अपने को कण्ठ,
उसके ही घट बीच विद्या का बसेरा हो।
उत्तम स्वभाव लख जान लो कुलीन जन,
कुलहीन नर में ही नीचता का डेरा हो।
आर्य तब जानों जब गुणों का प्रकाश होय,
नाम-गाम जान नहि उनका निवेरा हो।
लोचन विशाल विकराल जलें ज्वाल सम,
लखे तब जानो नर क्रोध का ही चेरा हो।

किससे क्या नष्ट होता है ?

दारिद्रयनाशनं दानं, शीलं दुर्गति नाशनम्।
अज्ञाननाशिनी प्रज्ञा, भावना भयनाशिनी।।

भावार्थ– दान गरीबी का नाश करता, उत्तम स्वभाव दुर्गति का नाश करता है उत्तम ज्ञान अज्ञान का नाश करता और उत्तम विचार धारा भय का नाश कर देती है।

पद्यार्थ

कर दान दरिद्र रहे न कभी, अपना धन दे उपकार कमावे।
नहिं होय बुरी गति जीवन में, जब उत्तमशील स्वभाव बनावे।
सब मूर्खता मिटती जड़ते जब ज्ञान करे, मति ठीक चलावे।
दृढ़ता अपनाय रहे जग में, मन से भ्रमभूत सभी भग जावें।

किसके समान क्या नहीं

नास्ति काम समा व्याधिः नास्ति मोह समोरिपुः।
नास्ति कोप समो वह्निर्नास्ति ज्ञानात् परं सुखम्।।

भावार्थ– काम वासना के समान रोग नहीं है और मोह के समान शत्रु नहीं है, क्रोध के समान आग नहीं है, ज्ञान से अधिक सुख किसी वस्तु में नहीं है।

पद्यार्थ

काम समान न व्याधि कही, लग जाये उसे बस धूरि मिलावे।
मोह समान कहां रिपु है, सुख हीन करे दिन रात जगावे।
आग न क्रोध समान कही, बिन ताप तपे सब गात जलावे।
ज्ञान समान नहीं सुख है, बिन साधन ज्ञान महासुख लावे।

कहाँ कौन मित्र है ?

विद्या मित्रं प्रवासेषु भार्यामित्रं गृहेषु च।
व्याधितस्यौषधं मित्रं, धर्मों मित्रं मृतस्य च।।

भावार्थ– घर से बाहर विद्या मित्र है, घर में पत्नी मित्र है। रोगी के लिए औषधि मित्र है और मरने वाले का धर्म मित्र होता है।

पद्यार्थ

भार्या घर में मित्र है, हरे औषधि शोक।
विद्या मित्र प्रवास में, धर्म मित्र परलोक॥

किसके समान क्या नहीं

नास्ति मेघ समं तोयं, नास्ति चात्मसमं बलम्।
नास्ति चक्षु समं तेजो, नास्ति धान्यं समं प्रियम्॥

भावार्थ– वर्षा के समान कोई गुणकारी जल नहीं है आत्मबल के समान कोई बल नहीं है आँखों के समान कोई तेज नहीं और अन्न के समान प्रिय कोई वस्तु नहीं है।

पद्यार्थ

आत्मिक बल सो बल नहीं, नहिं मेघ सम नीर।
तेज नेत्र सम है कहाँ, अन्न से रहे शरीर॥

सुनकर क्या होता ?

श्रुत्वा धर्मं विजानाति श्रुत्वा त्यजति दुर्मतिम्।
श्रुत्वा ज्ञानमवाप्नोति श्रुत्वा मोक्षमवाप्नुयात्॥

भावार्थ– सुनकर धर्म को जाना जाता है सुनकर ही बुरे विचार छोड़े जाते हैं, सुनकर ही ज्ञान प्राप्त होता है सुनकर ही मोक्ष को प्राप्त किया जा सकता है।

पद्यार्थ

सुन धर्म विवेक भरे मन में, तन में सुन सुन्दरता दर से।
सुन के नर बुद्धि सुबुद्धि करें, दुख दुर्गुण दूर भगें नर से।
शुभ ज्ञान मिले सुन के नर को, सुख साधन मेल मिलें हर से।
सब द्वन्द्व मिटें सुन के नर के, बन जीवन मुक्त सुधा बरसे।

किसमें कौन चाण्डाल ?

पक्षिणां काकश्चाण्डालः पशूनां चैव कुक्कुरः।
मुनीनां कोपी चाण्डालः सर्वेषां चैव निन्दकः॥

भावार्थ– पक्षियों में कौआ दुष्ट होता है पशुओं में कुत्ता अपवित्र माना जाता है, तपस्वियों में क्रोधी नीच प्रकृति का कहते हैं और दूसरे की निन्दा में तत्पर व्यक्ति सबसे नीच माना जाता है।

पद्यार्थ

अति पामर काग कहा खग बीच, सदा पशु को कर घाव सताये।
पशु जातिन में अति कुक्कर नीच, न बन्धु विलोक कभी हरसाये।
तपसी जन में बस क्रोध करें, नर मूढ़ वही अति नीच कहाये।
सबसे नर निन्दक नीच कहा, जुगली कर वैर विरोध बढ़ाये।

कौन क्या नहीं देखता

न पश्यति जन्मान्धः कामान्धो नैव पश्यति।
न पश्यति मदोन्मन्तो ह्यर्थी दोषान् न पश्यति।।

भावार्थ–जन्म से अन्धे को दिखाई नहीं देता, काम वासना में अन्धा व्यक्ति लोक लाज नहीं देखता है अभिमान में अन्धे व्यक्ति को भी यथार्थ बोध नहीं होता है और मांगने वाला भी अन्धा ही होता है। वह व्यक्ति गुण दोष न देख केवल इच्छित पदार्थ ही देखता है।

पद्यार्थ

नर नेत्र विहीन मलीन रहे, नहि देख सके अपने तन को,
अति कामुक बुद्धि विवेक तजे, नहि रोक सके कपटी मन को।
धन के मद में मदमस्त बना, कब देख सके नर सज्जन को,
नहिं याचक देख सके गुण दोष, लखे बस दायक के धन को।

शत्रु कौन है ?

ऋणकर्त्ता पिता शत्रुः माता च व्यभिचारिणी।
भार्या रूपवती शत्रुः पुत्रः शत्रुरपण्डितः।।

भावार्थः– साधन हीन होकर कर्ज कर देने वाला पिता शत्रु है व्यभिचारी करने वाली माता शत्रु है, रूपवान अति सुन्दर स्त्री भी शत्रु है, दुर्जन उस पर कुदृष्टि डालते यह जान पति क्लेश पाता है, मूर्ख पुत्र को भी शत्रु समझो।

पद्यार्थ

ऋण का करता रिपु ही समझो, मत बाप कहो धन धूरि मिलावे।
व्यभिचारी करे जग में विचरे, मत मात कहो कुटनी मर जावे।
अति रूपवती यदि नारी मिले, तब आफत ही गर में फंस जावे।
सूत मूरख जो घर में जन्मे, सुख शान्ति सभी घर की हर जावे।

क्या श्रेष्ठ नहीं है ?

वरं न राज्यं न कुराजराज्यं परं न मित्रं न कुमित्रमित्रम्।
वरं न कुशिष्य शिष्यो वरं न दारा न कुदारदाराः।।

भावार्थ– राज्य न हो तो अच्छा है पर बुरा राज्य ठीक नहीं है, मित्र न हो तो अच्छा है पर दुष्ट मित्र अच्छा नहीं है, शिष्य न हो तो अच्छा है पर दुष्ट शिष्य अच्छा नहीं है और स्त्री न हो तो अच्छा है पर दुष्ट स्त्री ठीक नहीं है।

पद्यार्थ

अपना हो राज पै सुराज राज होवे ठीक,
कुटिल कुराज राज अच्छा न बताया है।
सब सुखदायक ही मित्र का मिलाप कहा,
लेकिन कुमित्र करे घात मन भाया है।
सेवा बिना शिष्य के न होती कभी भली भांति,
लेकिन कुशिष्य करे जड़ से सफाया है।
पतिनी के बिना घर चलता न देखा कभी,
सर्वनाश कुल का कुलक्षिणी का माया है।

किससे सुख नहीं

कुराज राज्येन कुतः प्रजा सुखम्,
कुमित्र मित्रेण कुतो निवृत्तिः।
कुदारदौरश्च कुतोः गृहे रतिः।
कुशिष्य मध्यापयतः कुतो यशाः।

भावार्थः– दुष्ट राजा द्वारा शासित राज्य में प्रजा को सुख नहीं होता है दुष्ट मित्र के प्राप्त होने पर कभी शान्ति नहीं मिलती, दुष्ट स्त्री से दाम्पत्य जीवन नरक बन जाता है और दुष्ट शिष्य के पढ़ाने से कभी यश नहीं मिलता है।

पद्यार्थ

सुख से भरपूर प्रजा न रहे, जिसका नृप होय महाकुविचारी।
नर शान्त न होय कभी जग में, अति नीचहि संग कर जब यारी।
घर का सुख धूर मिले तबही, व्यभिचार करें घर की घरवारी।
गुरू की कब रीति हो जग में, जब मूढ़ बने उसके ब्रह्मचारी।

किससे क्या सीखें

सिंहादेकं बकादेकं शिक्षेच्चत्वारि कुक्कुटात्।
वायसात्पंच शिक्षेच्च षट् शुनस्त्रीणि गर्दभात्।।

भावार्थ– शेर से एक बगुले से एक, मुर्गे से चार, कौवे से पाँच, कुत्ता से छह और गदहे से तीन गुण सीखें।

पद्यार्थ

सिंह वगुल से एक गुण, अरु मुर्गे ते चार।
पाँच काक छह श्वान से, तीन गधे के धार।।

सिंह से क्या सीखें

प्रभूतं कार्यमल्पं वा यन्नरः कर्तुमिच्छति।
सर्वारम्भेण तत्कार्यं सिंहादेकं प्रचक्षते।।

भावार्थ– बड़ा कार्य हो या छोटा यदि मनुष्य उसे करना चाहता है तो पूरी शक्ति के साथ करे यही एक गुण शेर से सीखें।

पद्यार्थ

कार्य बड़ा हो या लघु, जो मन में आजाय।
पूरी शक्ति समेट कर, सिंह समान लगाय।।

बगुले से क्या सीखें

इन्द्रयाणि च संयम्य वकवत् पण्डितो नरः।
देश काल बलं ज्ञात्वा, सर्वकार्याणि साधयेत्।।

भावार्थ– विद्वान् व्यक्ति अपनी इन्द्रियों को निरन्तर संयम रख, देश काल बल जानकर अपने सारे कार्यों को सिद्ध कर ले, यही गुण बगुले से सीखें।

पद्यार्थ

इन्द्रिय संयम जो करे, कर बगुले सा ध्यान।
देश काल बल जानकर, साधे काम सुजान।।

मुर्गे से क्या सीखें

प्रत्युत्थानं च युद्धं च संविभागं च बन्धुषु।
स्वयमाक्रम्य भुक्तं च, शिक्षेच्चत्वारि कुक्कुरात्।।

भावार्थ– मतिमान व्यक्ति को मुर्गे से चार गुण सीखने चाहिए, जल्दी उठना, युद्ध का तरीका भाई बन्धुओं में बांटकर खाना, अपने पुरुषार्थ का ही भोजन करना।

पद्यार्थ

शीघ्र उठे रण में लड़े, करें बन्धु से प्यार।
निज श्रम से भोजन करे, मुर्गे में गुण चार॥

कुत्ते से क्या सीखें

बह्वाशी स्वल्पसन्तुष्टः सुनिद्रो लघुचेतनः।
स्वामिभक्तश्च शूरश्च षडते श्वानतो गुणः।।

भावार्थ– बहुत खाने वाला, न मिले तो थोड़े में ही सन्तुष्ट रहना, अच्छी नींद लेना, तुरन्त जाग जाना स्वाभिमान होना और वीरता यह छह गुण कुत्ते से लेने चाहिए।

पद्यार्थ

थोड़े से सन्तुष्ट, मिले तो खावे छककर।
स्वामिभक्त भरपूर, नींद ले थोड़ा जगकर।
करता शीघ्र प्रहार, शक्ति की जान महत्ता।
छहों गुण की सीख, हमें देता है कुत्ता।

गधे से क्या सीखें

सश्रान्तोपि बहेदभारं शीतोष्णं न च पश्यति।
सन्तुष्टश्चरते नित्यं, त्रीणि शिक्षेच्च गर्दभात्।।

भावार्थ– थका होते हुए भी भार ढोना, सर्दी–गर्मी की चिन्ता न करना, सदा सन्तुष्ट होकर विचरना यह तीन गुण गधे से सीखें।

पद्यार्थ

बिना थके सब भार ढोय, तज सर्दी गर्मी।
तीन गुणों की खान, गधा सन्तोषी धर्मी॥

बीस गुण

एतान् विंशति गुणान् चरिष्यति मानवः।
कार्यां वस्यासु सर्वासु, ह्यजेयः स भविष्यति।।

भावार्थ– जो मनुष्य इन बीस गुणों का धारण कर लेता है उसके सारे कार्य सिद्ध हो जाते हैं और

वह अजेय हो जाता है।

पद्यार्थ

जो इन बीस गुणों को, मन में लेगा धार।
कभी न डूबे बीच में, बेड़ा होगा पार॥

कहाँ सन्तोष करे कहाँ न करे

सन्तोषस्त्रिषु कर्त्तव्यः स्वदारे भोजने धने।
त्रिषु चैव न कर्त्तव्यो, तपस्याध्ययनदानयोः॥

भावार्थ– अपनी स्त्री में अपने भोजन में और अपने धन में सदैव सन्तोष रखना चाहिए। लेकिन तपस्या अध्ययन और दान में कभी सन्तोष नहीं करना चाहिए।

पद्यार्थ

श्रम से धन भोजन जो मिल जाय सदा उसमें मन मोद मनावे।
पर नारी सदा समझे भगिनी, अपनी पत्नी पर प्रीति जनावे।
तप त्याग सदा भरपूर करे, मत ज्ञान समेट विराम लगावे।
शुभ काम विचार करे धन दान, यही फल है धन का चितलावे।

पैर से किसको न छुये

पदाभ्यां न स्पृर्शेदग्निं गुरुं ब्राह्मणमेव च।
नैव गां न कुमारीं च न वृद्धे शिशुः तथा॥

भावार्थ– अग्नि, गुरु, ब्राह्मण, गौ, कुमारी, वृद्ध तथा बालक को पैर नहीं लगाना चाहिए।

पद्यार्थ

विप्र, शिशु, अग्नि, गुरू, अरू कन्या का गात।
वृद्ध, गौ इन सात में, कभी न मारे लात॥

किससे कितनी दूर रहे

शकटं पंचहस्तेन दशहस्तेन वाजिनम्।
हस्तिनं शतहस्तेन देशत्यागेन दुर्जनम्॥

भावार्थ– गाड़ी से पाँच हाथ, घोड़े से दस हाथ, हाथी से सौ हाथ और दुष्ट से देश त्याग कर भी दूर रहें।

पद्यार्थ

गज से शत हाथ रहे बचके, मत भूल कभी उसके ढिंग जावे।
दश हाथ बचाये रहे हय से, कर पैर प्रहार सुदूर गिरावे।
गज वाहन से बच पाँच रहे, न चपेट कभी उसकी लग पावे।
नर दुर्जन से बस दूर रहे, निज देश हू त्याग रहे सुख पावे।

कैसे किससे काम ले

हस्ती अकुशहस्ते न वाजी वशेन ताड्यते।
शृंगी लगुडस्तेन खंगस्तेन दुर्जनः।।

भावार्थ– हाथी को बस में करने के लिए अंकुश, घोड़े के लिए चाबुक, सींग वाले पशु के लिए लाठी और दुष्ट व्यक्ति के लिए तलवार से काम लें।

पद्यार्थ

गज अंकुश मान रहे वश में, नहिं और उपाय कभी अपनाये।
हय चाबुक देख रहे वश में, बिन चाबुक ठीक चले न चलाये।
पशु सींगन को जब आय जुटे, बिन लट्ठ न पैर पिछार हटाये।
तलवार बिना नर नीच न मानत, लाख उपाय करो मन भाये।

आये धन का क्या करें ?

उपार्जितानां वित्तानां त्यागं एव ही रक्षणम्।
तडागोदरसंस्थानां परीवाह इव अम्भसाम्।।

भावार्थ– कमाये हुए धन को उत्तम कार्यों में लगा देना ही उसकी रक्षा करनी है जिस प्रकार बहते हुए जल तालाब में सुरक्षित रहते हैं यदि उनका बहना रोक दिया जाय तो सड़ जाते हैं।

पद्यार्थ

श्रम से धन आगम करके, अपने सब काम सुचारू चलावे।
फिर शेष बचे धन को कर दान, सदा सबके हित काम करावे।
बिन दान रुका धन नाश करे, घर बाहर लो अपराध बढ़ावे।
जल ज्यों रुकता सड़ता सर में, शुचि होय चढ़े घन से जब आवे।

धन की महिमा

यस्यार्थास्तस्य मित्राणि यस्यार्थस्तस्य बान्धवाः।
यस्यार्थाः स पुमाँल्लोके यस्यार्थाः स च जीवति।।

भावार्थ– जिसके धन पास है उसके ही मित्र सब बनते हैं, जिसके पास धन है उसी को भाई बन्धु मानते हैं, जिसके पास धन है उसी को लोग पुरुष मानते हैं। धन हीन की ओर कोई ध्यान भी नहीं देता है। जिसके पास धन है उसी के जीवन में आनन्द है धनहीन का जीवन तो मरे के समान है।

पद्यार्थ

धन से सब मित्र बने जग में, धन हीन सदा दुःख भाजन हो।
सब बन्धु बने धन के बल से, धन से सबका हित साधन हो।
मत वैभव का अपमान करो, नहीं वैभव हीन महा जन हो।
धन हास विलास भरे मन में, धन के बिन हाय मरा मन हो।

स्वर्ग के चिह्न

स्वर्गस्थितानामिह जीव लोके चत्वारि चिह्नानि वसन्ति देहे।
दानं प्रंसगोमधुरा च वाणी देवार्चनं ब्राह्मण तर्पणं च।।

भावार्थ– इस संसार में जिन लोगों को साक्षात् स्वर्ग प्राप्त है उनके चिह्न चार हैं पहला तो दान का स्वभाव, दूसरा मधुर वाणी, तीसरा समाज सेवा में सर्वस्व समर्पित करने वाले देव लोगों के प्रति आदर का भाव, चौथा विद्वानों को सब प्रकार से सन्तुष्ट रखने वाला स्वभाव, यह चार लक्षण जहाँ हो वहाँ स्वर्ग ही है।

पद्यार्थ

सुख स्वर्ग सदा जिनके घर में, उनके शुभ लक्षण चार कहे।
धन आगम में नित दान करे, घर बीच उदार बहार रहे।
मधु बोल मिलें सब आपस में, उपकारिन के प्रति प्यार रहे।
नित आगम होय सुधीगण का, घर में उनका सत्कार रहे।

नरक के लक्षण

अत्यन्त कोपः कुटुका च वाणी, दरिद्रता च स्वजनेषुवैरम्।
नीच प्रसंगा कुलहीन सेवा, चिह्नानि देहे नरकस्थितानाम्।।

भावार्थ– नरक भी कहीं अन्यत्र नहीं है इसी दिन मनुष्य देह में देख लो, यह चिह्न जहाँ मिलें समझ लो वहाँ पर नरक है अत्यन्त क्रोध वाणी में कटुता हो, अत्यन्त निर्धनता हो और अपने ही लोगों के प्रति वैरभाव है। नीच की संगति में रहे तथा कुलहीन दुष्टों की नौकरी करें यदि इसी प्रकार का जीवन बिताना हो, तो घोर नरक में रहना है।

पद्यार्थ

छोटी मोटी बात में ही क्रोध अतिभारी करें,
वाणी बीच सभ्यता की नेक न निशानी हो।
वैर भाव भरा भरपूर परिवार में हो,
नीचता की संगति में बात अनजानी हो।
कुलहीन कुटिल कुचाली क्रूर कामियों की,
निश दिन सेवा कर जाती जिन्दगानी हो।
खाने-पीने-लेन-देन को न कुछ पास होवे,
भैया यही नरक की करुण कहानी हो।

विद्या हीन कैसा है ?

शुनः पुच्छमिव व्यर्थ जीवति विद्यया बिना।
न गुह्यगोपने शक्तं, न च दशं निवारणे।।

भावार्थ- विद्या से हीन पुरुष तो संसार में ऐसे व्यर्थ जीता है जैसे कुत्ता की पूँछ होती है वह न तो गुप्त इन्द्रिय ढकती है और न मक्खी मच्छर हटा सकती है।

पद्यार्थ

स्वान पूँछ सम व्यर्थ है, जामें विद्या नाँय।
गुप्त इन्द्रिय ना ढके, ना मक्खी ही जाँय।।

परमात्मा कहाँ है ?

पुष्पे गन्धं तिले तैलं काष्ठाग्नि पयसि घृतम्।
इक्षौ गुडं तथा देहे, पश्यात्मनं विवेकतः।।

भावार्थ- जैसे फूल में गन्ध, तिल में तेल, काठ में अग्नि ईख में गुड़, दूध में घी है ठीक इसी प्रकार विवेक से देह में आत्मा देखो।

पद्यार्थ

तिल में है तेल आग काठ में समाई ज्यों,
दूध में है घृत त्यों ही दृष्टि में न आता है।
पुष्प में है गन्ध गुड़ गन्ना में समाय रहा,
किये बिन यत्न कहो कौन जान पाता है।

काया मध्य आत्मा निवास इसी भांति करे,

विरला विवेकी कोई उसे देख पाता है।

करके विवेक ज्ञान योगादि साधनों से,

योगी ब्रह्मपथ का पथिक बन जाता है।

कौन कब मर जाता है ?

हतं ज्ञानं क्रियाहीनं हतश्चाज्ञानतो नरः।

हतं निर्नायकं सैन्यं, स्त्रियो नष्टा अभर्तृका।।

भावार्थ– बिना प्रयोग में लाये ज्ञान भरा हुआ है। अज्ञानी मनुष्य को भी मरा हुआ समझो, बिना सेनापति के सेना मरी समझो और बिना पति के पत्नी मृतक तुल्य ही होती है।

पद्यार्थ

उपयोग बिना सब ज्ञान वृथा, करके उपयोग सुधी हरसावे।

नर ज्ञान विहिन मरा समझो, चहुँ ओर फिर दुःख दारूण पावे।

बिन नायक सैन्य कहा करि है, निर्देश बिना सब ही मर जावे।

पति के बिना नारि दुखारी महाँ, मन को दुःख जाय कहाँ बतलावें।

कब बुरी दशा होती है ?

वृद्धकाले मृता भार्या बन्धु हस्ते गतं धनम्।

भोजनं च पराधीनं, तिस्र पुसां विडम्बना।।

भावार्थ– यदि बुढ़ापे में पत्नी मर जाय, भाई बन्धु धन छीन ले और दूसरे के अधीन भोजन हो तो समझो तीनों इन अवस्था में मनुष्य की दुर्गति की पराकाष्ठा है।

पद्यार्थ

तन वृद्ध भये पतिनी मर जाय, सुनो जग जीवन दूभर हो।

हड़पे जब बन्धु निजी धन को, घर बाहर लो सब ऊभर हो।

अरु भोजन हाथ पसार मिले, इससे दुःख ना कछु ऊपर हो।

जब ऊपर के दुःख तीन मिले, दुःख दारुण हाय न भूपर हो।

किसके बिना क्या व्यर्थ है ?

अग्निहोत्रं बिना वेदा, न च दानं बिना क्रिया।

न भावेन बिना सिद्धिः, अभावो मूलकारणम्।।

भावार्थ– बिना अग्निहोत्र के वेद की सार्थकता नहीं और दान के बिना सारी क्रिया बेकार है बिना भावना के कार्य सिद्धी ही नहीं होती, भाव हीनता ही इन सब विफलताओं का मूल कारण है।

पद्यार्थ

बिन यज्ञ के वृथा वेद समझो, कर यज्ञ सदा भव से तरना।
सब काम वृथा बिन दान दिये, कर दान भली करनी करना।
तन ठीक न हो तन भाव बिना, मन में न विचार वृथा भरना।
भर लो दिल में जगदीश्वर को, यदि चाहत हो दुख से तरना।

कहाँ किसका गौरव है ?

विद्वान् प्रशस्यते लोके, विद्वान् गच्छति गौरवम्।
विद्यया लभ्यते सर्वं विद्या सर्वत्र पूज्यते।।

भावार्थ– संसार में विद्वान् की ही प्रशंसा होती है विद्वान ही गौरव को प्राप्त करता है विद्या से सब कुछ प्राप्त हो जाता है विद्या सर्वत्र आदर को प्राप्त होती है।

पद्यार्थ

विद्वान् प्रशंसित हो सदा, विद्या गौरव लाय।
विद्या से वैभव मिले, विद्या पूजी जाय॥

कौन भूमि पर भार ?

मांस भक्षैः सुरापनैर्मूर्खैश्चाक्षरवर्जितैः।
पशुभिः पुरुषाकारैः भारा क्रान्ताहि मेदिनी।।

भावार्थ– मांसाहारी, शराबी, मूर्ख, अक्षर ज्ञान रहित, पुरुष पशुओं समान पृथ्वी पर केवल भार बनकर रह रहे हैं।

पद्यार्थ

मांस खाय मदिरा पिये, मूरख निपट गंवार।
नर तन धारी पशुन को, भूमि ढो रही भार॥

परमात्मा की विचित्र सृष्टि

गन्ध सुवर्णे फलमिक्षुदण्डे नाकारि पुष्पं खलु चन्दनस्य।
विद्वान् धनाढ्यश्च नृपश्चिरायुः धातु पुरासौ हि विचित्रितोऽभूत्।।

भावार्थ– सोने में सुगन्ध नहीं है, गन्ना में फल नहीं होता है चन्दन के वृक्ष में फूल नहीं होता है

विद्वान धनवान नहीं होता है राजा लम्बी आयु वाला नहीं होता है यह परमात्मा की सृष्टि भी विचित्र है।

पद्यार्थ

सोने में सुगन्ध नहीं, गन्ना बीच फल नहीं,
फूल नहीं चन्दन में एक भी लगाया है।
विद्या के विलासी को मंगाई दर दर भीख,
धनहीन जाने क्यों प्रभु ने बनाया है।
भूप अति आयु का का न होवे अधिकारी यहाँ,
खाते पीते जाने कैसे चली जात काया है।
कैसा विचित्र चित्र सृष्टि का निहार देख,
ईश के विचार का न पार कुछ पाया है।

किसको जगाये ?

विद्यार्थी सेवकः पन्थ क्षुधार्त्तो भयकातरः।
भण्डारी प्रतिहारी च सप्त सुप्तान् प्रबोधयेत्।।

भावार्थ– विद्यार्थी, सेवक, यात्री, भूखे, भयभीत हुए, भण्डार के व्यवस्थापक और द्वारपाल को सोते हुए जगाने में दोष नहीं होता है।

पद्यार्थ

सेवक , विद्यार्थी, पथिक, भूखा या भयभीत।
द्वारपाल, भण्डारपति, जगा देय बिन प्रीत॥

इन्हें न जगाये

अहिं नृपं च शार्दूलं किटीं च बालकं तथा।
परश्वानं च मूर्खं च सप्त सुप्तान् न बोधयेत्।।

भावार्थ– साँप, राजा, शेर, सुअर, बालक, मूर्ख और दूसरे का कुत्ता इन सातों को सोते हुए कभी नहीं जगाना चाहिए।

पद्यार्थ

साँप शेर सूकर तथा पर घर सोया श्वान।
सात न सोते छेड़िये बालक भूप अजान॥

किसका पढ़ना सफल

अर्थाधीताश्च यैर्वेदास्तथा शूद्रान्नभोजिनः।
ते द्विजाः किं करिष्यन्ति निर्विषा इव पन्नगाः।।

भावार्थ– जिन्होंने केवल धन कमाने के लिए वेदों को पढ़ा है अथवा जिन्होंने केवल वेदों का ज्ञान किया है। जीवन की क्रिया में नहीं उतारा और जो मूर्ख अज्ञानियों को बहकाकर अपनी आजीविका चलाते हैं वें ब्राह्मण किसी काम के नहीं होते हैं विषहीन सर्प की तरह प्रभाव कम होता है।

पद्यार्थ

जो केवल पेट भरें जग में, वह वेद पढ़ा किस काम का है।
उपयोग न जीवन में लाता, वह ज्ञानी केवल नाम का है।
जो मूढ़ जनों को बहकाकर, अपना उल्लू सीधा करते।
वे नीच महापापी बनकर, दुःख सागर बीच डूब मरते।
विषहीन साँप से वे जीते, होता है तनिक प्रभाव नहीं।
धिक्कार योग्य जीवन उनका, परहित में जिन्हें लगाव नहीं।

किसका क्या उपाय ?

इक्षु दण्डास्तिलाः शूद्राः कान्ता हेम च मेदिनी।
चन्दनं दधि ताम्बूलमर्दनं गुण वर्धनम्।।

भावार्थ– गन्ना, तिल, मूढ़, स्त्री सोना भूमि चन्दन दही और पान को पेरने रगड़ने ताड़ने, अनुशासन तपाने जोतने घिसने चबाने आदि से ही गुण बढ़ते हैं।

पद्यार्थ

रस गन्ना देता चूँसे से, तिल देता तेल पिराई से।
घिसने चन्दन गन्ध करें, मूरख हो ठीक ठुकाई से।
तापें से सोना चमक उठे, नारी बस रहे कड़ाई से।
दधि के मथने से मक्खन हो, फल देती भूमि जुताई से।
रंग पान न हाथ धरे देता, रंग देता खूब चबाई से।
इन सबका सेवन ठीक करो, नहिं काम चले कविताई से।

दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं वस्त्रपूतं जलं पिवेत्।
शास्त्रपूतं वदेद्वाचं मनः पूतं समाचरेत्।।

भावार्थ– देखभाल कर मार्ग में चले, कपड़े से छानकर जल पिये, शास्त्र ज्ञान पवित्र कर वाणी से बोले, मन पवित्र कर आचरण करे।

पद्यार्थ

देखभाल कर चाल चल, जल पीबे नित छान।
शास्त्र युक्त ही बात कर, मन रख सदा महान॥

किसको विद्या नहीं ?

सुखार्थिनः कुतो विद्या विद्यार्थिनः कुतः सुखम्।
सुखार्थी वा त्यजेद् विद्यां विद्यार्थी वा त्यजेद् सुखम्॥

भावार्थ– सुख का चाहने वाला विद्या को त्याग दे, विद्या चाहने वाला सुख को त्याग दे, सुख चाहने वाले को विद्या कहाँ, विद्या चाहने वाले को सुख कहाँ।

पद्यार्थ

विद्या कब पास गई उनके जिसके दिल में सुख आस भरी।
यह पास सदा उनके रही, खोते न वृथा जो एक घरी।
वे छोड़े विद्या का लालच, जिनके मन में बस मौज भरी।
विद्या मधु के चाहक जन को, कब कहाँ चैन नींद परी।

अपनी बुद्धि के बिना सब व्यर्थ

यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा, शास्त्रं तस्य करोति किम्।
लोचनाभ्यां विहिनस्य, दर्पणः किं करिष्यति॥

भावार्थ– जिसके पास अपनी बुद्धि नहीं है, शास्त्र उसके लिए इसी प्रकार बेकार है। जिस प्रकार अन्धे व्यक्ति के लिए दर्पण बेकार है।

पद्यार्थ

निज बुद्धि से हीन को, शास्त्र ज्ञान बेकार।
ज्यों अन्धा नहीं देखता, दर्पण में आकार॥

द्वेष से क्या होता ?

आत्मद्वेषात् भवेन्मृत्युः परद्वेषात् धनक्षयः।
राजद्वेषात् भवेन्नाशो ब्रह्मद्वेषात् कुलक्षयः॥

भावार्थ– जो व्यक्ति अपने आत्मज्ञान के प्रतिकूल चलता है वह समझे मृत्यु को प्राप्त है जो

दूसरों से द्वेष करता है उसे धन की हानि होती है। जो शासकीय व्यवस्थाओं को तोड़ देता हो उसका नाश हो जाता है। जो ज्ञान व ज्ञानी लोगों से द्वेष करता है उसका कुल नीच हो जाता है।

पद्यार्थ

जो आत्मा के ज्ञान के प्रतिकूल करता आचरण।
वह मूढ निश्चय मृत्यु का ही कर रहा होता वरण।
जो द्वेष करता है सभी से जग पराया मान के।
धन धूलि में उसका मिले शंका रहित ये जानकर।
यदि राज द्वेषी बन गये तो कुशल फिर है कहाँ।
सब जगह सत्ता है उसकी तुम रहो चाहे जहाँ।
ब्रह्म द्वेषी का न जग में हो सके विश्वास है।
उसके तो कुल का समझ लो सब तरह से नाश है।

कहाँ नहीं रहना ?

वरं वनं व्याघ्रग्रजेन्द्र सेवितं,
द्रुमालयः पत्रप्लाम्बु भोजनम्।
तृणेसु शय्या शत जीर्ण बल्कलं,
न बन्धु मध्ये धनहीन जीवनम्।

भावार्थ– हाथी शेर आदि जंगल जीवों के बीच जंगल में रहना अच्छा है, वृक्षों के पत्ते फल आदि को भोजन कर निर्वाह करे और पेड़ों की छाल से बने मोटे फटे कपड़े पहनकर जीवन बिताये, सूखे घास–पात की शैय्या बनाकर सो जाये, लेकिन अपने बन्धु बान्धवों को बीच निर्धन होकर रहना ठीक नहीं क्योंकि धनहीन की सब उपेक्षा करते हैं और प्रतिपल यह अपमान घोर मानसिक कष्ट पहुँचाता है।

पद्यार्थ

गज व्याघ्र भरे वन में विचरो, भयभीत रहो दिन रात बिताओ।
द्रुम के तल में रह वास करो, फल फूल मिलें उनको बस खाओ।
तृण पात करो अपनी सुख सेज, फटे कपड़े तन से चिपटाओ।
मत भूल निवास करो कुल में, धनहीन भये कुल ते हटवाओ।

का चिन्ता मम जीवने यदि हरिर्विश्वम्भरो गीयते,
नोचेदर्भकजीवनाय जननीस्तन्यं कथं निर्मयेत्।
इत्यालोच्य मुहुर्मुहुर्यदुपते कथं निर्मयेत् लक्ष्मीपते केवलं,
त्वत्पादाम्बुंज सेवनेन सततं कालौ मया नीयते।

भावार्थ– संसार के पालन करने वाले ईश्वर के गीत यदि मेरे जीवन में गाये जाते हैं तो कोई चिन्ता नहीं करने की बात नहीं क्योंकि ईश्वर हमारी चिन्ताओं को स्वतः समाप्त करेगा नहीं तो बच्चा पैदा होने से पहले बच्चे की माता के स्तन में दूध क्यों बनाता है। ऐसा विचार करके सम्पूर्ण ऐश्वर्य के स्वामी प्रजापालक की शरण में छोड़ देते हैं और हामरा समय उसी के अनुसार व्यतीत हो रहा है।

पद्यार्थ

जब से विश्वास हुआ प्रभु में सारी चिन्ता को त्याग दिया।
दुनियाँ में आने से पहले माँ के स्तन को दूध दिया।
चहुँ ओर लखा जग में हमने उस व्यापक अन्तर्यामी को।
उस परमपिता जगदीश्वर को अनुपम लक्ष्मी के स्वामी को।
सब खटका दूर हुआ मेरा आनन्दमग्न होकर नांचा।
भीषण संकट की घड़ियों में, मैंने उसको परखा जाँचा।

किसमें क्या नहीं ?

गृहासक्तस्य नो विद्या नो दया माँसभोजिनम्।
द्रव्यलुब्धस्य नो सत्यं स्त्रैणस्य न पवित्रता।।

भावार्थ– घर के मोह में फँसे व्यक्ति को विद्या प्राप्त नहीं, माँस खाने वाले में दया का भाव नहीं होता, धन के लोभी में सत्य नहीं होता और लम्पट व्यक्ति में पवित्रता नहीं रहती।

पद्यार्थ

कब विद्या का कोष मिला उसको,
घर के प्रति जो अनुरागी रहा।
न दया उपजी उसके उर में,
रस माँस के भोज में भागी रहा।
उसमें कब सत्य निवास करे,
धन का कर लोभ न त्यागी रहा।
कब लम्पट का मन ठीक रहे,
पर नारी के राग में रागी रहा।

विद्या के लिए क्या करें ?

कामं क्रोधं तथा लोभं स्वादु शृंगार कौतुके।
अतिनिद्रा अति सेवे च विद्यार्थी अष्ट वर्जयेत्।।

भावार्थ– जो विद्यार्थी अपना हित चाहे उसे काम, क्रोध, लोभ, स्वाद सजावट, अधिक सोना, व्यर्थ में खेल तमाशों में जाना अत्यन्त चापलूसी ये आठ चीज छोड़ देनी चाहिए।

पद्यार्थ

तज वासना में वास को, बसता रहे सद्ज्ञान में।
उत्तेजना तज क्रोध की, प्रभु तेज लाये ध्यान में,
विद्या के प्रति लोभी रहे, मत लोभ कर संसार का।
रसना रखे मत स्वाद में, मत नाम ले शृंगार का।
दुर्दृश्य टी. बी. आदि के, उनसे सदा मन थाम ले।
मत नींद ले सुख सेज पर, थोड़ा बहुत विश्राम ले।
सेवा करे यह ठीक है, रख चापलूसी दूर ही।
इतना करे जो जन उसे, विद्या मिले भरपूर ही।

मार्जार कौन

पर कार्य विहन्ता च दाम्भिकाः स्वार्थसाधकः।
छली द्वेषी मृदुः क्रूरो विप्रो मार्जार उच्यते।।

भावार्थ– दूसरे के कार्य की हानि करने वाला ढोंगी अपने कार्यों में सदा लगा रहने वाला, छल करने वाला, द्वेष भाव रखने वाला, अपने कार्यों को सिद्ध करने के लिए बनने वाला, दूसरे के कार्य के करने के समय आँख दिखाने वाला विद्वान विलाव के समान है।

पद्यार्थ

विघ्न डालता शुभ कर्मों में, नित्य ढोंग करता है।
स्वार्थ भावना में रत रहकर, द्वेष भाव भरता है।
छलता है निश्चल लोगों को, विनयशील बन जग में।
स्वार्थ सिद्ध करने पर कपटी, बाधा दे पग–2 में।
ऐसे जनों से नीतिमान नर, सावधान रहते हैं।
निपट नीच ऐसे द्वेषी जन, को ही विलाव कहते हैं।

किसका गृहस्थ धन्य

सानन्दं सदनं सुताश्च सुधियः कान्ता प्रियालापिनी।
सन्मित्रं सुधनं स्वयोषिति रतिः स्वाज्ञापरा सेवकः।

आतिथ्यं शिवपूजनं प्रतिदिनम् मिष्ठान पानं गृहे।
साधोः संगमउपासते च सततं धन्योग्रहस्थाश्रमः।

भावार्थ– जिस गृहस्थ में आनन्द हो पुत्र पुत्रियाँ बुद्धिमान् हो पत्नी मधुर बोलने वाली हो पुण्य से धन आता हो, अपनी स्त्री के अतिरिक्त अन्य स्त्री पर काम वासना ही की दृष्टि न पढ़े, नौकर आज्ञा का पालन करने वाले हों, विद्वान परोपकारी हों अथितियों का सत्कार हो, प्रतिदिन संध्या में ईश्वर का सब लोग ध्यान करते हों, उत्तम ज्ञान उत्तम दूध का अभाव न हो, निरन्तर वेदादि शास्त्रों के जानने वाले साधुओं का सत्संग हो, वह धन्य हैं।

पद्यार्थ

आनन्द का सागर बहे, संतान भी मतिमान हो।
धर्म से ही धन मिले , परमात्मा का ध्यान हो।
नारी मिले प्रियभाषिणी, नर नारी में प्रीति हो।
सेवक रहे आदेश में, सेवा की घर में रीति हो।
स्वाहा की पावन गूंज गूँजे, दूध घी की खान हो।
सत्संग सन्तों का रहे, अतिथि का भी सम्मान हो।
बस स्वर्ग उस घर को कहो, न स्वर्ग कोई अन्य है।
उसका ही जीवन है जगत में, गृहस्थ उसका धन्य है।

कौन शरीर निन्दनीय है

हस्तौ दान विवर्जितौ श्रुतिपुटौ सारस्वत द्रोहिणौ।
नेत्रे साधु विलोकनेन रहिते पादौ न तीर्थं गतौ।
अन्यायर्जित वित्तपूर्णमुदरं गर्वेण तुंगं शिरो।
रे रे जम्बुक मुचं मुंच सहसा नीचं सुनिन्द्यंवपुः।

भावार्थ– एक गीदड़ एक नीच मनुष्य के शरीर को खाने को तैयार है कवि उसे रोकते हुए कहता है अरे गीदड़ ! इस मनुष्य ने कभी हाथों से किसी को दान आदि देकर सहारा नहीं दिया। कानों से वेदादि शास्त्रों को पवि.त्र ज्ञान नहीं सुना, आँखों ने कभी किसी को अच्छी दृष्टि से नहीं देखा, पैरों से जहाँ सत्संग हो या विद्या के उत्तम स्थान हों वहाँ नहीं गया। दूसरों के मुँह का निवाला छीनकर अपना पेट भरता रहा, शिर दीनों को सताकर सदा घमण्ड से तना रहा, इस प्रकार शरीर के प्रत्येक अंग से इसने निन्दनीय कार्य किये। प्रत्येक अंग नीचता की कीच में सना है तू ऐसे शरीर को खाकर पेट मत भर।

पद्यार्थ

कानों से न सुने वेद है, हाथ दान से खींचे।
अच्छी जगह पैर न रखे, सज्जन से दृग मींचे।
शीश उठाकर चला गर्व से, पेट लूट कर पाला।
धन के लिए बहाया जग में, सदा खून का नाला।
अपने स्वास्थ के हित इसने, दीन दु:खी तड़पाया।
रे-रे गीदड़ छोड़ न खाना, बड़ी नीच है काया।

प्रारब्ध बलवान

पत्रं नैव यदा करीर विटपे दोषो वसन्तस्य किं।
नोलूकोऽप्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम्।
वर्षा चैव पतन्ति चातक मुखे मेघस्य किं दूषणम।
यत्पूर्वं विधिनाललाट लिखितं तन्मार्जितुं कः क्षेमः।

भावार्थ– यदि करील के पेड़ पर पत्ते नहीं आते तो वह वसन्त ऋतु का क्या दोष है अगर उल्लू को दिखाई नहीं देता तो इसमें सूर्य का क्या दोष है? पपीहा के मुख में यदि वर्षा की बूँद नहीं जाती तो बादलों का क्या दोष है? यह सब भाग्य का खेल है जो प्रकृति भाग्यवश ईश्वर ने दी है इसे उसे मिटाने वाला कोई नहीं है।

पद्यार्थ

पात न होत करीलहि मांहि, तो दोष बसन्त ऋतु को कहाँ है।
देख सके दिन में न उलूक, कहो रवि को तब दोष कहाँ है।
चातक के मुख बूँद परे नहिं, मेघन को फिर दोष कहाँ है।
जो विधि ने लिख लेख दियो, फिर मेंट सके कब कौन यहाँ है।

श्मशान तुल्य घर

न विप्र पादोदक कर्दमानि,
न वेदशास्त्र ध्वनि गर्जितानि।
स्वाहा स्वधाकार विवर्जितानि,
श्मशान तुल्यानि गृहाणि तानि।

भावार्थ– जिस घर में वैदिक विद्वानों के चरण धोने से कीचड़ नहीं हुआ। जहाँ वेदशास्त्रों के

मन्त्रों की ध्वनि नहीं गूंजी। जहाँ यज्ञादि शुभकार्य नहीं होते हैं वे घर श्मशान के समान ही समझने चाहिए।

पद्यार्थ

वेदपाठी विप्रजन जिनके यहाँ आते नहीं।
हाथ धोकर के जहाँ भोजन कभी पाते नहीं।
वेदमन्त्रों से न गुंजित जिन घरों में गान है।
स्वाहा स्वधा से हीन ऐसे घर नहीं श्मशान है।

जीवन में क्या करना चाहिए

अनित्यानि शरीराणि,
विभवो नैव शाश्वतम्।
नित्यं सन्निहितो मृत्युः,
कर्त्तव्यो धर्म संग्रह॥

भावार्थ– व्यक्ति को सदैव यह विचार अपने मन में दृढ़ रखना चाहिए कि शरीर सदा रहने वाला नहीं, संसार के ऐश्वर्य भी एक न एक दिन साथ छोड़ देंगे। मृत्यु नित्य ही साथ खड़ी है अतः निरन्तर सदा साथ रहने वाले धर्म को संचित करना चाहिए।

पद्यार्थ

इस देह ने साथ दिया किसका,
अति को करके अभिमानी गये।
धनवान गये बलवान गये,
अपनी बस छोड़ निशानी गये।
सब वैभव के तज कोश गये,
नृप छोड़ भरी राजधानी गये।
तुम धर्म धरोहर को धरलो,
कहते कहते सब ज्ञानी गये।

पण्डित कौन है ?

मातृवत् परदारेषु,
पर द्रव्येषु लोष्ठवत्।
आत्मवत् सर्वभूतेषु,
सः पश्यति सः पण्डितः।

भावार्थ– जो दूसरों की स्त्रियों माता का भाव रखता है और दूसरे के धन को मिट्टी के समान समझता है तथा सब प्राणियों के हानि लाभ सुख दुःख अपने समान समझता है। उसको ही पण्डित समझना चाहिए।

पद्यार्थ

पर नारि गिने निज मात समान,
सदा उसको हिय में सन्माने।
पर द्रव्य सदा समझे न निजी,
उसको बस कंकण पत्थर माने।
सब जीव सदा अपने समझे,
नहिं घात करे कबहूँ अनजाने।
उसको सब पण्डित विज्ञ कहे,
जिसके गुण सभ्य समाज बखाने।

सज्जन के गुण

धर्मे तत्परता मुखे मधुरता, दाने समुत्साहता।
मित्रेऽवंचकता गुरौ विनतता, चित्तेऽपि गम्भीरता।
आचारे शुचिता गुणे रसिकता, शास्त्रेषु विज्ञातता।
रुपे सुन्दरता शिवे भजनता, सत्स्वेव संदृश्यते।।

भावार्थ– धर्म के प्रति लगाव, मुख में मिठास, दान देने में उत्साह, मित्रों के प्रति छल रहित व्यवहार, गुरुओं के प्रति विनयशीलता, चित्त में गम्भीरता शास्त्रों का गहन स्वाध्याय आचरण में पवित्रता, परमात्मा के प्रति भक्ति भावना आकृति में सुन्दरता ये लक्षण सज्जनों में स्वाभाविक रूप से पाये जाते हैं।

पद्यार्थ

दान में उल्लास व मिठास भरी वाणी बीच,
धर्म काम करने में रुचि अधिकाई है।
मित्रों के बीच में व्यवहार छल रहित करे,
धीरता की भावना ही चित्त में समाई है।
गुणों में रसिक शुचिता का भाव जीवन में,
शास्त्र ज्ञान बीच बस लगन लगाई है।

सुन्दर स्वरूप भक्ति भाव है अनूप जामें,

ऐसी दिव्य गुण राशि सज्जन में पाई है।

कौन शीघ्र नष्ट होता

अनालोक्यं व्ययकर्त्ता, अनाथः कलहप्रियं।
आतुरः सर्व क्षेत्रेषु, नरः शीघ्रं विनश्यति।।

भावार्थ– बिना विचारे व्यय करने वाला, बन्धु–बान्धवों में हीन होते हुए लड़ाई चाहने वाला, प्रत्येक कार्य को करने के लिए बिना ज्ञान के ही शीघ्रता करने वाला, शीघ्र ही विनाश को प्राप्त होता है।

पद्यार्थ

बिन सोच विचार करे खरचा,
उसकी धन दौलत कौन बचावें।
बिन बन्धु लड़े जग में सबसे,
चहुँ ओर पिटे दुःख दारुण पावे।
बिन ज्ञान अनेकन काम करे,
फलहीन रहे मन में पछतावे।
इतने सब काम करे नर जो,
अतिशीघ्र विनाशहि पास बुलावे।

जल बिन्दुनिपातेन क्रमशः पूर्यते घटः।
स हेतु सर्व विद्यानां धर्मस्य च धनस्य च।।

भावार्थ– जिस प्रकार एक–एक बूँद डालने से घड़ा भर जाता है उसी तरह धर्म, धन और सब प्रकार की विद्या का संचय धीरे–धीरे करना चाहिए।

पद्यार्थ

एक–एक जल बूँद से, सुनो घड़ा भर जाय।
विद्या धन अरु धर्म भी इसी तरह से आय।।

मुहूर्त्तमपि जीवेत् नरः शुक्लेन कर्मणा।
न कल्पमपि कष्टेन लोकद्वय विरोधिनाः।।

भावार्थ– मनुष्य अच्छे कार्य करता हुआ यदि एक क्षण भी जीवित रहता है, तो अतिश्रेष्ठ है और इस लोक और परलोक दोनों को बिगाड़ने वाले कर्मों को करता हुआ यदि युगों तक जीता है तो ऐसा जीवन व्यर्थ है।

पद्यार्थ

थोड़ा जीवन है सफल, करके सुन्दर काम।
व्यर्थ जिया सौ वर्ष लों, होकर के बदनाम॥

गते शोको न कर्त्तव्यो भविष्यं नैव चिन्तयेत्।
वर्त्तमानेन कालेन प्रवर्तन्ते विचक्षणा।।

भावार्थ– बीते हुए समय के लिए शोक नहीं करना चाहिए न भविष्य के लिए सोचना चाहिए बुद्धिमान् व्यक्ति सदा वर्त्तमान के अनुसार कार्य करने में प्रयत्नशील रहते हैं।

पद्यार्थ

चिन्ता छोड़ भविष्य की, तजे भूत का नाम।
वर्त्तमान को देखकर, करे विवेकी काम।

जीवन्तं मृतवन्मन्ये देहिनं धर्म वर्जितम्।
मृतोऽधर्मेण संयुक्तो दीर्घजीवी न संशयः।।

भावार्थ– विवेकीजन धर्म से रहित पुरुष को जीते हुए भी मरा मानते हैं इसमें कोई सन्देह नहीं है कि अधर्म से जुड़ा व्यक्ति बहुत समय जीते रहने पर मरे के समान है।

पद्यार्थ

जिस देह में पुण्य का वास नहीं,
वह देह नहीं बस मांटी को ढेला।
निज स्वारथ साथ रहा जग में,
घर बाहर लों नित डार झमेला।
बहुकाल रहा जग में नर जीवित,
छोड़ चला सब नीच अकेला।
मृत ही समझो उस जीवन को,
पर के हित दान करे नहिं धेला।

यथा धेनु सहस्रेषु वत्सो गच्छति मातरम्।
तथा यच्च कृतं कर्म कर्त्तारमनुगच्छति।।

भावार्थ– जैसे हजारों गायों के बीच में बछड़ा अपनी माँ के पास स्वयं चला जाता है। इसी प्रकार व्यक्ति के जो पूर्व किये कर्म हैं उनके फल कर्म करने वाले के पास स्वतः पहुँच जाते हैं।

पद्यार्थ

धेनु हजार भले ही रहें,
बछड़ा झट ढूंढ़ लगे निज माता।
नेकहु भूल परे न कभी,
पय को कर पान महा सुख पाता।
ठीक इसी विधि से नर का,
कृतकर्म सदा उसके संग जाता।
लोक रहे परलोक रहे,
पर जीव सदा उनके फल पाता।

अनवस्थित कार्यस्य न जने न वने सुखम्।
जने दहति संसर्गो वने संग विवर्जनम्।।

भावार्थ– जिन लोगों के कार्य स्थिर नहीं होते हैं उन्हें न लोगों के बीच शान्ति मिलती है और न वन में शान्ति मिलती है। सामाजिक जीवन उसके लिए सन्ताप कारक होता है। जंगल में अकेलापन उसे दुःख देता है।

पद्यार्थ

जिनके कछु काम नहीं स्थिर हैं, उनको कब शान्ति मिले वन में।
सब ठौर दुःखी मन से विचरें, न निवास करें मिल जीवन में।
जन में सन्ताप रहे उनको, जलते ही रहें अपने मन में।
वन में अकेले रहना न बने, नहिं सौख्य मिले तन में धन में।

पृथिव्यां त्रीणि रत्नानि जलमन्नं सुभाषितम्।
मूढैः पाषाण खण्डेषु, रत्न संज्ञा विधीयते।।

भावार्थ– पृथिवी पर जल, अन्न और सुन्दर वाणी तीन ही रत्न हैं परन्तु मूर्खों ने हीरे, मोती, आदि पत्थरों में रत्नों की कल्पना करली है।

पद्यार्थ

घूम घूम भूतल पै खोज भरपूर करी,
तीन में ही सार-सारे रत्नों को पाया है।
पहला है रतन जल जीवन का हेतु जानो,
वृक्ष फल-फूल बीच जल की ही माया है।

अन्न है रत्न दूजा प्राणियों का प्राण मानो,

अन्न बिन सूख जाय हृष्ट पुष्ट काया है।

तीसरा रतन रसना का है रसीला बोल,

मोल में न जिसके रतन कोई आया है।

आत्मापराधवृक्षस्य फलान्येतानि देहिनाम्।
दरिद्राय रोग दुःखानि बन्धनं व्यसनानि च।।

भावार्थ– देहधारी आत्मा द्वारा तैयार किये दुष्ट कर्मरुपी वृक्ष के गरीबी, बीमारी, दुःख, पराधीनता, बुराइयों में फंस कर सर्वनाश होना ही फल हैं।

पद्यार्थ

नर देह धरे अपराध करे, उसके फल भोग करे तन में।
धन हीन रहे अति रोग लगे, शुभ सोच रहे न कभी मन में।
सब साधन हीन उदास रहे, नहि आस रहे जग जीवन में।
इस भांति महादुःख शोक सहे, कर भोग मरे पिछले पन में।

पुनर्वित्तं पुनमित्रं पुनभार्या पुनर्महीः।
एतत् सर्वं पुनर्लभ्यं न नृजन्म पुनः पुनः।।

भावार्थ– संसार में धन, मित्र, पत्नी, भूमि यह सब बार–बार मिल जाते हैं पर मनुष्य जन्म बार–बार मिलना कठिन है।

पद्यार्थ

धन मीत गये कछु हानि नहीं,
शुभ यत्न सदा धन मीत मिलाये।
पतिनी अपनी तज जाय कभी,
कर शोक न और विवाह रचाये।
यदि भूमि गई कछु हानि नहीं,
धन के बल से फिर भूमि बनाये।
पर मानव जन्म गये जग में,
कुछ भी कर ले फिर हाथ न आये।

बहूनां चैव सत्वानां समवायो रिपुंजयः।
वर्षधाराधरो मेघस्तृणैरपि निवार्यते।।

भावार्थ– संसार में विजय चाहने वाले मनुष्य को आवश्यक है कि छोटे-बड़े सभी व्यक्तियों को अपने साथ मिलाकर रखना चाहिए जैसे घास-भूस से बनाई हुई झोपड़ी मूसलाधार वर्षा को रोक देती है।

पद्यार्थ

यदि चाहत है रण में जय को,
मत छेड़ करो चहुं ओर लड़ाई।
लघु वृद्ध सभी निज साथ रखो,
धर ध्यान रहो न तजो चतुराई।
लघु से लघु का मत त्याग करो,
अतिकाम करे लघु की लघुताई।
लघु फूस समेट बनी कुटिया,
जलधार रुकी बरसा जब आई।

धर्माख्याने श्मशाने च रोगिणां च मतिर्भवेत्।
सा सर्वदैव तिष्ठेच्चेत् को न मुच्येत् बन्धनात्।।

भावार्थ– वैराग्य पूर्ण प्रवचन सुनने के बाद, रोगपीड़ित व्यक्ति को देखकर जो बुद्धि उत्पन्न हो जाती है यदि वह स्थिर हो जाये तो फिर कौन नहीं सांसारिक बन्धनों से छूट सकता है।

पद्यार्थ

सत्संग सुने उपदेश गुने तब राग गयो निज जीवन से।
श्मशान मिली जब देह जली ममता निकली जग की मन से।
सब गात गला नहि जाय चला निकला बल रोग लगा तन से।
यह स्थिर भाव रहे हिय में तब फन्द कटें भवन बन्धन से।

अग्निरापः स्त्रियोमूर्खाः सर्पा राज कुलानि च।
नित्यं यत्नेन सेव्यानि सद्य प्राण हराणि षट्।।

भावार्थ– अग्नि, जल, स्त्रियां, मूर्ख, सर्प, राजकुल इनसे व्यवहार बड़ी सावधानी से करना चाहिए। थोड़ी सी चूक होने पर यह छहों प्राण घातक होते हैं।

पद्यार्थ

मूर्ख, अग्नि, नारी, नृपति, सांप भयंकर नीर।
नित्य सेविये ज्ञान से, चूके जाय शरीर॥

त्यज दुर्जन संसर्ग भज साधु समागमम्।
कुरु पुण्यमहोरात्रं स्मर नित्यांनित्यताम्।।

भावार्थ– दुष्टों की संगति त्याग कर सज्जन पुरुषों की संगति करनी चाहिए। नित्यता और अनित्यता को निरन्तर विचार कर रात-दिन शुभ करने चाहिए।

पद्यार्थ

दुर्जन की संगति तजो, करो साधु का साथ।
क्षण भंगुर जग जानकर, पकड़ पुण्य का हाथ।।

तद् भोजनं यद् द्विजभुक्तशेषं,
तत्सौहृदयं या क्रियते परस्मिन्।
सा प्राज्ञता या न करोति पापं,
दम्भं विनायः क्रियते स धर्मः।

भावार्थ– वही भोजन उत्तम और हितकारी माना जाता है जो विद्वानों को खिलाकर खाया जाय, दूसरों के साथ दया का वर्त्ताव किया जाय वही उत्तम भावना मानी जाती है। उत्तम बुद्धि वही है जिससे पाप न किया जाय और वही श्रेष्ठ धर्म माना जाता है जिसमें ढोंग और पाखण्ड न हो।

पद्यार्थ

भोजन है फलदायक वो, बच जाय करे घर भोजन योगी।
भाव वही अति उत्तम है, अपने सम यों पर का उपयोगी।
पाप न भूल किया जिसने, उससे अपनी मति ठीक प्रयोगी।
ढोंग बिना उपदेश करे, उसको समझो सबका सहयोगी।

जल्पन्ति साधर्मन्येन पश्यन्त्यन्यं सविभ्रमः।
हृदये चिन्तन्त्यन्यं न स्त्रीणामेकतो रतिः।
यो महान् मन्यते मूर्खे रक्तेयं मयि कामिनी,
सातस्य वरागी भूत्वा नृत्येत् क्रीड़ा शकुन्तवन्।

भावार्थ– नारियां किसी के साथ बात करती हैं किसी की ओर तिरछी निगाह से देखती हैं हृदय में किसी का चिन्तन करती हैं तात्पर्य यह है कि स्त्रियों की किसी एक के प्रति आसक्ति नहीं होती है। पर मूर्ख व्यक्ति समझता है कि यह स्त्री मुझ पर आसक्त है और फिर उसी की वशीभूत होकर पिंजड़े में बन्द पक्षी की तरह नाचता है।

पद्यार्थ

मानता है मूढ़ मोहवश अति होकर के,
कामिनी की कामना में तेरा ही निवास है।
जानता नहीं नीच नीति नारियों की कछु,
करती हैं मोद मान हास व विलास है।
सोचे फिर दिन-रात उसी बात को ही,
घटी कोई बात जो भी नारियों के पास है।
नाचता है कीर सम फंसा पिंजरे में जैसे,
झेलता है बीच जग भारी उपहास है।

न निर्मितः केन दृष्टपूर्वः न श्रूयते हेममय कुरंगः।
तथापि तृष्णा रघुनन्दनस्य विनाश काले विपरीत बुद्धिः।।

भावार्थ– न सोने का हिरन किसी ने देखा है न सुना है फिर भी तृष्णा के वशीभूत होकर राम ने सोने के हिरन होने का विश्वास कर लिया। ठीक ही कहा है कि जब नाश का समय आता है तो बुद्धि विपरीत हो जाती है।

पद्यार्थ

हेम का कुरंग नहीं विधि ने बनाया कहीं,
जग में न ऐसा कहीं देखा सुना जाता है।
जाने कैसे सिया उसे देख ललचाई फिर,
बोली आर्य हेममृग मुझे अति भाता है।
सोचे व विचारे बिन राम धाये मृग हेतु,
ऐसा काम देखकर विचार यही आता है।
ठीक ही कहा है कवि लोगों ने विचारकर,
आवे जब नाश तब विवेक मर जाता है।

अतिक्लेशेन ये चार्था धर्मस्याति क्रमणेतु।
शत्रुणां प्रणि पातेन ते ह्यर्थाः मा भवन्तु मे।।

भावार्थ– अत्यन्त कठिनता से प्राप्त हुआ धन, धर्म को लोप कर प्राप्त हुआ धन और शत्रु के पैरों में पड़कर प्राप्त हुआ धन स्वीकार नहीं करना चाहिए। यह सब धन अत्यन्त दुःखदायी होते हैं।

पद्यार्थ

अतिकष्ट करे धन हाथ लगे,
मत भूल कभी उसको अपनावे।
अरु धर्म विनाश भये धन हो,
मन रोक रखे न कभी ललचावे।
रिपु के पग में गिरके धन हो,
न गहे धनहीन भले मर जावे।
इतने धन पा धनवान बने,
नर नीच सदा दुःख दारुण पावे।

धनेषु जीवितव्येषु स्त्रीषु चाहार कर्मसु।
अतृप्ताः प्राणिनः सर्वे याता यास्यन्ति यान्ति च।।

भावार्थ– धनों में और अनेक प्रकार के जीवन में एकत्रित साधनों में, स्त्रियों में और सुन्दर आहारों में भी प्राणी सन्तुष्ट नहीं होता। सभी की असन्तुष्टि एक समान है जो चले गये जायेंगे और अब जा रहे हैं।

पद्यार्थ

धन से कब तृप्ति मिली नर को मन के अनुकूल किले बनवाये।
फिर भोजन के भरपूर पदारथ भोग अनेक करे मन भाये।
अति सुन्दर नारि रची घर में बन के रसिया रस खान कहाये।
दुःख दारुण झेल रहे अब तो अति रोग लागे सब भोग विलाये।

प्रियवाक्य प्रदानेन सर्वे तुष्यन्ति जन्तवः।
तस्मात्तदेव वक्तव्यं वचने का दरिद्रता।।

भावार्थ– सुख प्रदान करने वाले प्रिय और मधुर वाक्य बोलने से सभी जीव सन्तुष्ट रहते हैं। इसलिए प्रिय बोलने में दरिद्रता नहीं दिखानी चाहिए।

पद्यार्थ

प्रिय वाक्य प्रदान करे जब हि,
अपना दिल भी सुख से हरसावे।
हर जीव चखे रसना रस को,
सुख शान्ति सदा मन में अति पावे।

यह नीति सदा हिय में रखना,

कटु बात न भूल कभी मुख लावे।

प्रिय बोलने में कब दाम लगें,

बिन दाम सुधा रस क्यों न पिलावे।

संसार कटुवृक्षस्य द्वे फले अमृतोपमे।
सुभाषितुं च सुस्वादु संगतिः सुजने जने।।

भावार्थ– संसाररुपी अत्यन्त कड़ुवे वृक्ष पर दो फल अमृत के समान कहे गये हैं एक तो मधुर वाणी और दूसरा फल है साधुजनों की शुभ संगति।

पद्यार्थ

संसार रुपी वृक्ष अति कड़ुआ बताया गया,

जिसने चखा दुःख भोग पछताया है।

इसमें लगे हैं फल अमृत समान दो ही,

विरला विवेकी कोई इसे जान पाया है।

प्रथम है फल बोले मधुर-मधुर बोल,

जिससे बनेगा झट अपना पराया है।

दूसरा है फल सत्संगति करो जी नित,

ज्ञान बल बढ़े बने काम मन भाया है।

पण्डित के लक्षण

आत्मज्ञानं समारम्भस्तितिक्षा धर्मनित्यता।
यमर्था नापकर्षन्ति स वै पण्डित उच्यते।।

भावार्थ– जो व्यक्ति आत्मा और परमात्मा को जानकर यथाशक्ति कार्य करता हुआ नित्य धर्म में स्थिर रहकर दुःख सुख को सहन करता है। सांसारिक विषय जिसे अपनी ओर आकर्षित नहीं करते। उसी को पण्डित कहा जाता है।

पद्यार्थ

आत्मा परमात्मा की नित्यता को जानता जो,

आलस्य प्रमाद त्याग श्रम को बढ़ाता है।

सुख दुःख आदि सब द्वन्द्व का सहन कर,

नित्य प्रति वेद पथ को ही अपनाता है।

जिसको न कोई लोभ धर्म से हटाके कभी,

अधर्म अनीति करने को ललचाता है।

कहती है विदुर नीति रीति के बात सुनो।

ऐसा नर ही तो सच्चा पण्डित कहाता है।

क्रोधो हर्षश्च दर्पश्च ह्रीस्तम्भो मान्या मानिता।
यमर्थान्नापकर्षन्ति स वै पण्डित उच्यते।।

भावार्थ– जिसे क्रोध, हर्ष, घमण्ड, लज्जा, ढीढता और सम्मान का भाव आकर्षित नहीं करते उसे ही पण्डित मानना चाहिए।

पद्यार्थ

लज्जा, क्रोध व ढीढता, मान और अपमान।
इनमें सम होकर रहे, उसको पण्डित जान।।

यस्य कृत्यं न जानन्ति, मन्त्रं व मन्त्रितम् परे।
कृतमेवास्य जानन्ति स वै पण्डित उच्यते।।

भावार्थ– जिसकी योजना को, विचार को और विचारने के बाद निश्चित किये ज्ञान को विरोधी नहीं जान पाते हैं जब कार्य पूरा हो जाय तभी जान पाते हैं वही पण्डित कहाता है।

पद्यार्थ

सोचे-विचारे कार्य को न जानते हैं शत्रुजन।
सफलता के साथ जो, पूरा करे अपना मनन।
गूढ़ रखता ध्येय को कहता नहीं कोई वचन।
पण्डित कहें उस व्यक्ति को संसार के सब विज्ञजन।

यस्य कृत्यं न विघ्नन्ति शीतमुष्णं भयं रतिः।
समृद्धिरसमृद्धिर्वा स वै पण्डित उच्यते।।

भावार्थ– जिस व्यक्ति के कार्य को सदी गर्मी, भय अथवा विषयों के प्रति आसक्ति, गरीबी और अमीरी नहीं रोक सकती है उसको पण्डित कहा जाता है।

दोहा (पद्यार्थ)

सर्दी गर्मी दरिद्रता भय व विषयासक्ति।
पण्डित वही कार्य न रोके, देख घोर आपत्ति।।

❋❋❋

॥ ओ३म् ॥

श्री गुरु विरजानन्द आर्ष गुरुकुल वेदमन्दिर, मथुरा

का

वार्षिक–उत्सव

पर

ऋग्वेद पारायण यज्ञ

दिनांक– 25 जून से 03 जुलाई 2023 तक दिन– रविवार से सोमवार तक

सभी भद्रपुरुषो !

आपके अपने गुरुकुल श्री विरजानन्द आर्ष गुरुकुल, वेदमन्दिर मथुरा का वार्षिक उत्सव आषाढ़ शुक्ला पूर्णिमा तदनुसार 25 जून से 03 जुलाई 2023 दिन रविवार से सोमवार तक मनाया जा रहा है। हम इस पर्व को श्री विरजानन्द जयन्ती के रूप में मनाते हैं। इस अवसर पर नवीन ब्रह्मचारियों के प्रवेश के अवसर पर उपनयन संस्कार का भव्य आयोजन होता है। उस समय वैदिक कालीन दृश्य उपस्थित हो जाता है। आप भी परिवार सहित आकर अपने बच्चों को वैदिक संस्कृति से संस्कारवान करें जिससे वे अपना, परिवार, राष्ट्र और समाज का उद्धार कर सकें।

यही मानव जीवन की सफलता है ऐसे पुनीत कार्य में सैकड़ों सांसारिक आवश्यक कार्यों को विराम देकर भी पधारें। क्योंकि ऐसे जीवन निर्माण के समय बार–बार नहीं आते। उत्सव आप लोगों के लिए ही है उसकी सफलता का दायित्व भी आप पर है। आशा है इस दैवीय दायित्व का निर्वहन कर अपने मानव जीवन को सार्थक करेंगे।

निवेदक

अध्यक्ष	मंत्री	कोषाध्यक्ष
आचार्य स्वदेश	**डा0 प्रवीन अग्रवाल**	**दिनेशचन्द्र बंसल**
9456811519	9359518799	9412728407

विशेष:–गुरुकुल आने के लिए बस या ट्रेन से उतरने के बाद मसानी (अग्रसेन) चौराहा, वृन्दावन मार्ग पर स्थित है। यहाँ से पूर्व की ओर आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग (कच्ची सड़क) पर मात्र 100 पग चलकर गुरुकुल का मुख्य द्वार है।

वैश्विक जीवन तक जिस विचार पथ का अवलम्बन सर्वकल्याण की कामना लेकर करता है और सफलता पूर्वक अपने लक्ष्य तक पहुँचता है उसे साहित्य क्षेत्र में नीति के नाम से जाना जाता है। ऐसी नीति के विषय में जिस शास्त्र में विस्तृत जानकारी दी जाती है उसे नीति शास्त्र कहते हैं। नीति शास्त्र का सम्बन्ध मात्र उन बातों से रहता है जो व्यवहारिक जीवन की दिनचर्या से लेकर प्रत्येक आचरण को जो हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को उन्नत करता है और सर्वकल्याण के साधक के रूप में नियंत्रित करता है। हमारे संस्कृत भाषा के साहित्य में इस शास्त्र का विपुल भण्डार मिलता है जैसे विदुर नीति, चाणक्य नीति, भर्तृहरि का नीति शतक, विष्णु शर्मा रचित पंचतन्त्र. , कणक नीति इत्यादि हमने इस प्रकार के विपुल साहित्य का अवलोकन किया। पुनः हिन्दी साहित्य के कविओं के भी नीति सम्बन्धी दोहे, कुण्डलियों आदि को देखा। हमने पाया हमारे साहित्य में हमारे पूर्वजों के अनुभूति के मोती बिखरे पड़े हैं। पर बड़े शोक का विषय है वर्तमान पीढ़ी उससे सर्वथा विमुख होकर मानवीय जीवन की कल्याणकारी वैचारिक धारा के लाभ से वंचित होकर अपना सर्वस्व खो रही है। विचार शून्यता के कारण अशान्ति के वातावरण में आत्म हत्या करने से लेकर अपने प्रियजन की हत्या तक निःसंकोच कर रही है। आज की पीढ़ी भाषा और भाव दोनों से हाथ धोकर अपने सर्वनाश का द्वार खोल बैठी है। अमूल्य मानव जीवन को व्यर्थ खो रही है। ऐसी दुःखद स्थिति का अवलोकन कर नीति शास्त्र के इस वचन को हृदयंगम कर कि संसार में वर्षा जल से पवित्र जल नहीं और ज्ञान के समान कोई सुख नहीं है। हमने निश्चय किया कि सर्वसाधारण की भाषा में नीति के भावों को पहुँचाया जाय, वह भी इतना सरल करके कि सामान्य व्यक्ति से लेकर विद्वान् तक सबके लिये उपयोगी हो। हमने **नीति निधि** नामक पुस्तक छाप कर प्रचारित करने का विचार किया।

इस पुस्तक में हमने विदुर नीति, चाणक्य नीति और नीति शतक से श्लोकों का चयन किया है। श्लोकों के अर्थ हिन्दी में गद्य और पद्य दोनों प्रकार से किये हैं जिससे कविता प्रेमीजनों को विशेष लाभ हो। हिन्दी भाषा की नीति–विषयक उन कविताओं का भी संग्रह किया है। जो लोक भाषा में भी प्रचलित रही हैं। जिससे नई पीढ़ी उस ज्ञान को प्राप्त कर जीवन पथ पर सुगमता से चल सके। इस पुस्तक की उपयोगिता स्वाध्यायशील पाठकों से ही ज्ञात हो सकेगी। उन सारे कवियों, लेखकों, मनीषियों के प्रति हम कृतज्ञ हैं जिनकी लेखनी से निःसृत कविताओं और श्लोकों को हमने संग्रह कर पुस्तक में रखा है। आशा है पाठक अवश्य ही लाभ उठाकर हमारे श्रम को सफल करेंगे।

ऋषि अनुचर

स्वदेश

सत्य प्रकाशन मथुरा के अनमोल प्रकाशन

शुद्ध रामायण (सजिल्द)	220.00	आर्यों की दिनचर्या	30.00	नमस्ते ही क्यों	10.00
शुद्ध रामायण (अजिल्द)	170.00	चार मित्रों की बातें	20.00	आदर्श पत्नी	10.00
योग दर्शन	150.00	भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक	20.00	ब्रजभूमि और कृष्ण	8.00
शंकर सर्वस्व	120.00	मील का पत्थर	20.00	सच्चे गुच्छे	8.00
मानस पीयूष (रामचरित मानस)	100.00	भ्रांति दर्शन	20.00	मृतक भोज और श्राद्ध तर्पण	8.00
शुद्ध कृष्णायण	80.00	शान्ता	20.00	भागवत के नमकीन चुटकुले	8.00
नित्य कर्म विधि	70.00	संध्या रहस्य	20.00	मानव तू मानव बन	8.00
शुद्ध हनुमच्चरित (प्रेस में)		गीता तत्व दर्शन	20.00	गायत्री गौरव	5.00
वैराग्य दिवाकर	50.00	गृहस्थ जीवन रहस्य	20.00	सफल व्यक्तित्व	5.00
वैदिक संध्या विधि	50.00	श्रीमद् भगवत गीता	20.00	जीजा साले की बातें	5.00
दो मित्रों की बातें	50.00	दयानन्द और विवेकानन्द	15.00	पंचाग के गुलाम	5.00
दो बहिनों की बातें	50.00	शुद्ध सत्यनारायण कथा	15.00	सर्प विष उपचार	4.00
विदुर नीति	40.00	महाभारत के कृष्ण	15.00	चूहे की कहानी	4.00
वैदिक स्वर्ग की झांकियाँ	40.00	महिला गीतांजलि	15.00	सत्यार्थ प्रकाश मेरी दृष्टि में	4.00
चाणक्य नीति	40.00	इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ	12.00	दयानन्द की दया	3.00
महाभारत के प्रेरक प्रसंग	40.00	बाल मनुस्मृति	12.00	शंकराचार्य और मूर्ति पूजा	3.00
वेद प्रभा	30.00	ओंकार उपासना	12.00	शांति पथ	2.00
शान्ति कथा (प्रेस में)		पुराणों के कृष्ण	12.00	सुमंगली (प्रेस में)	
भारत और मूर्ति पूजा	30.00	दादी पोती की बातें	10.00	बाल सत्यार्थ प्रकाश (प्रेस में)	
यज्ञमय जीवन	30.00	दण्डी जी का जीवन पथ	10.00		

आवश्यक सूचना

1. पाठकगण वर्ष 2023 के लिये वार्षिक शुल्क 200/- रूपये अविलम्ब भिजवायें तथा पन्द्रह वर्ष की सदस्यता हेतु 2100/- भिजवायें।
2. पत्रिका भेजने की तारीख प्रतिमाह 7 व 14 है, कृपया ध्यान रखें।

बुक-पोस्ट
छपी पुस्तक/पुस्तिका

सेवा में,

....

....

....

....

.... पिन कोड ....

पत्र व्यवहार का पता :-
व्यवस्थापक - कन्हैयालाल आर्य
सत्य प्रकाशन
डाकघर- गायत्री तपोभूमि, वृन्दावन मार्ग
(आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग), मसानी चौराहे के पास,
मथुरा (उ० प्र०) 281003
मोबा. 9759804182

Yogendra # 9927136600

मुद्रक : स्वामी, प्रकाशक, सम्पादक आचार्य स्वदेश के लिए मित्तल कम्प्यूटर प्रिंटर्स, वृन्दावन रोड, मथुरा में छपकर सत्य प्रकाशन मथुरा से प्रकाशित